ॐ शिव गोरक्षः नाथाय नमः

अतीत का प्रतीक

(वैदिक प्रमाण सहित)
(हिन्दी टीका पद्धति)

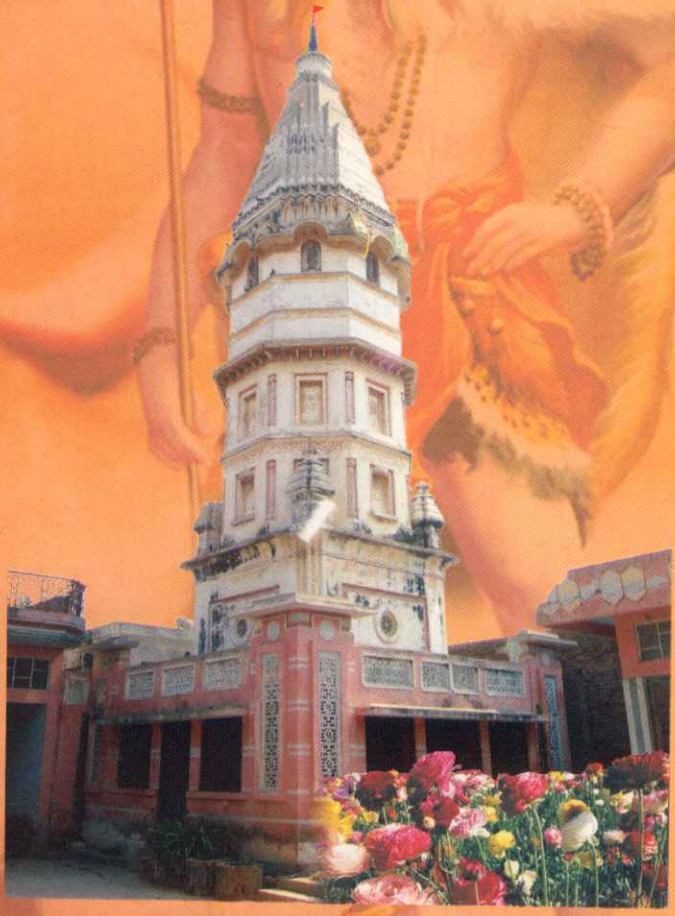

लेखक–**योगी शुक्राईनाथ**
शिष्य महन्त श्री डॉ० चेताईनाथ जी महाराज (कण्डेला जीन्द)

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णु गुरुदेवो महेश्वरः।
गुरु साक्षात् परंब्रह्मा तस्मै श्री गुरवे नमः॥

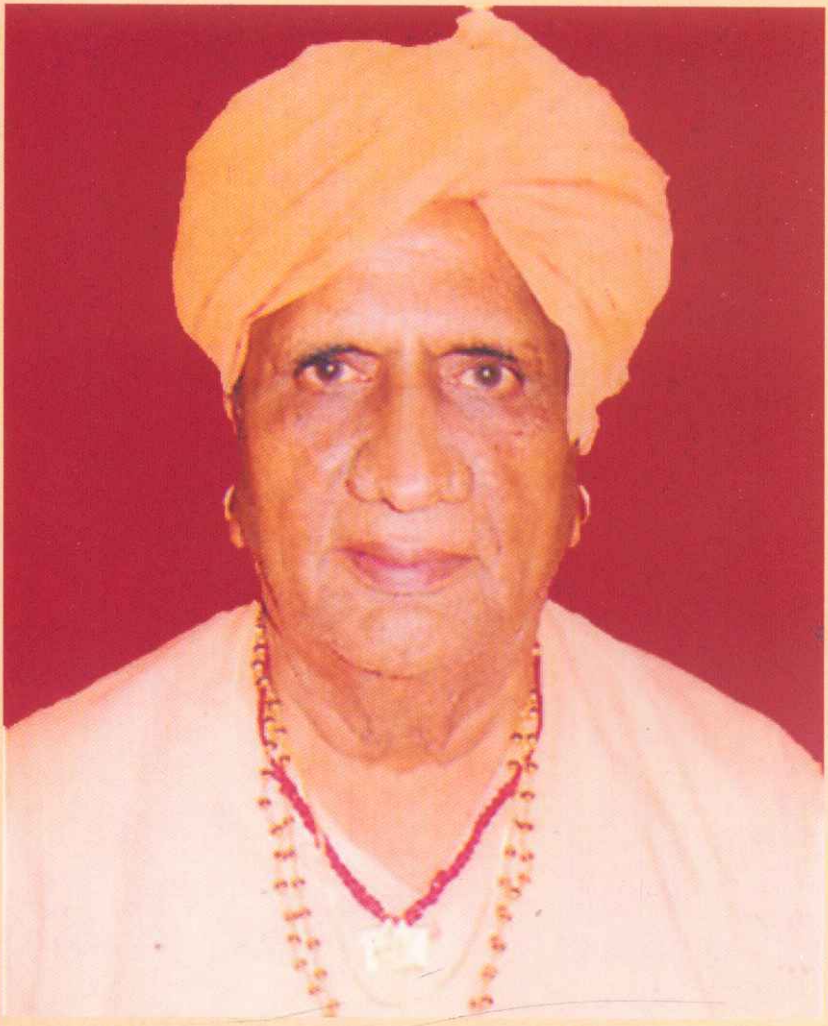

परम पूज्य सत्गुरु श्री चेताईनाथ जी महाराज

महामंत्री अवधूत योगी महासभा (हरिद्वार)

ॐ शिव गोरक्षः नाथाय नमः

अतीत का प्रतीक

(वैदिक प्रमाण सहित)

(हिन्दी टीका पद्धति)

लेखक :

योगी शुक्राईनाथ

शिष्य महन्त श्री डॉ. चेताईनाथ जी महाराज

प्रकाशक :

श्री स्वामी कृिष्णाईनाथ योगाश्रम, कण्डेला (जीन्द, हरियाणा)

© सर्वाधिकार सुरक्षित

पुस्तक प्राप्ति स्थान :

अखिल भारतवर्षीय अवधूत भेष बारह पंथ योगी महासभा

गुरु गोरक्षनाथ मन्दिर (अखाड़ा), अपर रोड हरिद्वार (उत्तराखण्ड)

श्री बाबा समताईनाथ योगाश्रम

गांव नावाँ, जिला महेन्द्रगढ़ (हरियाणा)

श्री स्वामी कृिष्णाईनाथ योगाश्रम

गांव कण्डेला, जिला जीन्द (हरियाणा)

श्री बाबा चन्द्राई नाथ योगाश्रम

गांव पथरवा, जिला महेन्द्रगढ़ (हरियाणा)

श्री मंगलाई नाथ समाधि मन्दिर

अलेवा जीन्द (हरियाणा)

1 सितम्बर 2013

प्रथम संस्करण-2000 प्रति]

[मूल्य 51/-

॥ श्री गणेशाय नमः ॥

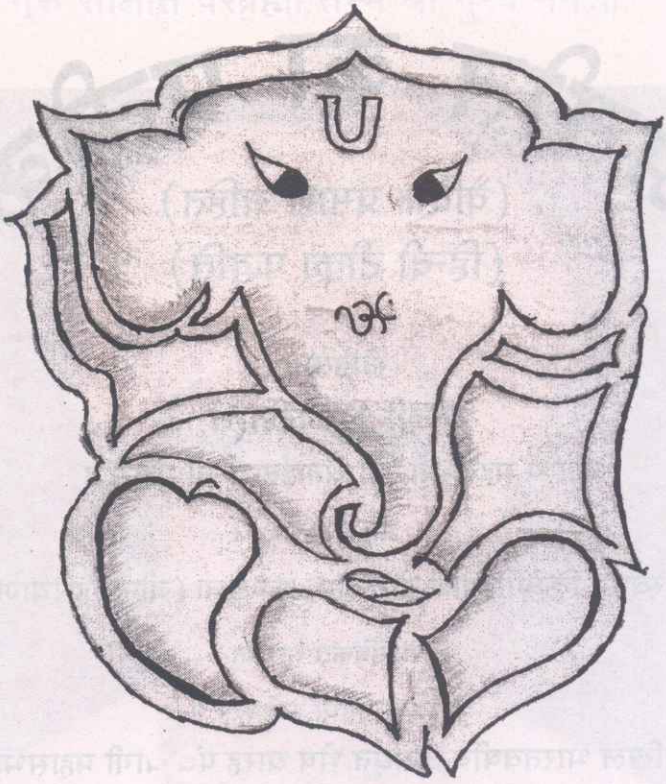

चित्रांकन–योगी गंगाईनाथ
(छोटे गुरु भाई)

लेखक सम्पर्क सूत्र–
योगी शुक्राईनाथ
चलभाष :
09991621105–हरियाणा राज्य
09536768125–उत्तराखण्ड राज्य
08006041073–उत्तराखण्ड राज्य
सुझाव हेतु ईमेल–tisriadalt@gmail.com

अनुक्रमणिका

क्रम	विषय	पृष्ठ संख्या
1.	भागीरथी गंगा माँ की महिमा व हमारा कर्तव्य	1
2.	आदर्श वैदिक ज्ञान	4
3.	वेदों में भगवत्कृपा प्राप्त्यर्थ प्रार्थना	8
4.	वेद कथा का एक परिचय–वैशिष्टय	11
5.	वेदों का प्रादुर्भाव	12
6.	अनन्त वेद	15
7.	वेदों के शिक्षाप्रद वृतान्त	17
8.	वेदों के प्रतिपाद विषय	18
9.	वेदों में आध्यात्मिक सन्देश	20
10.	वेद में योग विद्या	25
11.	वेदों में विमान (प्रमाणिक)	28
12.	धर्म के विधान एवं वास्तविक धर्म	31
13.	संगीत साकार जीवन है	34
14.	जीवन की पहेली	36
15.	ज्ञान की महत्वता	37
16.	नैतिकता का मूल्य	39
17.	लिप्सा विनाश का कारण है	40
18.	त्याग और आशक्ति	42
19.	पवित्र मन	43
20.	योग की वास्तविक व्याख्या	45

क्रम	विषय	पृष्ठ संख्या
21.	कर्मों की श्रेष्ठता	47
22.	रास्ता पतन का है जलन	49
23.	तपस्या का महत्व	51
24.	पुरुषार्थ का महत्व सामर्थ्य की महत्ता	52
25.	ईश्वर की सामर्थता शक्ति	54
26.	भक्ति और शक्ति	55
27.	प्रायश्चित/पश्चाताप	57
28.	अनुराग का महात्म्य	58
29.	नकारात्मक चिन्तन	61
30.	नीति का लक्ष्य	63
31.	कामयाबी अर्थात सफलता	64
32.	आत्मविश्वास शैली	66
33.	संस्कृति–धर्म में विचार मन्थन एवं साकार निराकार का प्रमाण	68
34.	एक नजर राष्ट्र की ओर	85

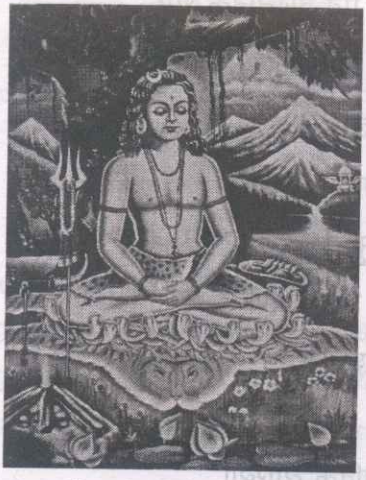

श्री योगाचार्य शम्भूजती गुरु गोरक्षनाथ जी

आशीर्वचन

प्रिय योगी शुक्राईनाथ
शुभाशीर्वाद!

अति हर्ष हुआ कि आपने हिन्दुस्तान के वैदिक विधानानुसार एक कृति जिसका नाम **'अतीत का प्रतीक'** है की रचना कर योग धर्म को बढ़ावा दिया तथा सामाजिक क्षेत्र में अपनी भागीदारी अदा की, इसके साथ ही कहना चाहूँगा कि आगे भविष्य में भी अपने पूर्ण विवेक द्वारा हिन्द राष्ट्र के उत्थान हेतु समाज में फैली अंधविश्वास रूपी कुरीतियों एवं हिन्दुत्व (सनातन) से घृणा करने वाले विषैले कीटाणु रूपी राष्ट्रविरोधी षड़यन्त्रों का जाल फैलाया जा रहा है। उन कूटनीति अपनाने वालों से धर्म आधारपूर्वक लोहा लेते हुये अपने वतन की आबरू को बचाने हेतु पूर्ण प्रयत्नशील रहते हुये अन्यान्य कृतियों की रचना एवं दिव्य प्रवचनों के माध्यम से अपनी मंजिल तक पहुँचने को प्रयासरत रहो। इसमें सम्पूर्ण नाथ सम्प्रदाय आपके हितार्थ सतत् अखण्ड ज्योतिस्वरूप होगी तथा नाथ सम्प्रदाय के सम्पूर्ण योगेश्वरों को व्यसनमुक्ति की ओर अग्रसर करते हुये व्यसन को त्याज्य कराने हेतु धर्म प्रचार–प्रसार में अपनी अहम् भूमिका निभाते हुये हिन्दुस्तान की चिरकाल से प्रचलित **'नाथ'** संस्कृति एवं सम्प्रदाय को अपना सम्पूर्ण जीवन समर्पण भाव से अर्पित कर इसी प्रकार अग्रणीय रहो। इसी प्रेरणा के साथ अल्प शब्दों में ही एक बार फिर आशीर्वाद देता हूँ और आपके भावी एवं कीर्तिवान भविष्य की शिव गोरक्ष शक्ति से प्रार्थना करता हूँ।

शुभेच्छुक :

(योगी आदित्यनाथ जी)
वर्तमान सांसद
लोक सभा

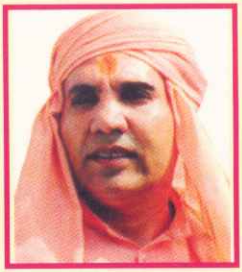

आशीर्वचन

प्रिय योगी शुक्राईनाथ
शुभाशीर्वाद!

हमारी नाथ सम्प्रदाय के बाल योगी एवं सन्तों का भारतीयता के प्रति अगाध प्रेम देखकर हृदय गद्‌गद् हो रहा है क्योंकि आज चारों ओर से राष्ट्र को मानो कुचला सा जा रहा है। अतः देश के हितार्थ हम हमारे नाथ योगी जनों को यही दिशा–निर्देश देते हैं कि भगवान योगाचार्य गुरु गोरक्षनाथ जी की इस अखण्ड सम्प्रदाय को हिन्दुत्व के उत्थान एवं सेवाभाव से सुकर्म करते हुये कर्तव्य परायणता के साथ आगे बढ़ो और उन्नति की ओर अपनी सारी शारीरिक, मानसिक एवं बौद्धिक शक्तियों का झुकाव रखो एवं हर प्रकार के रचनात्मक एवं क्रियात्मक विकल्पों से श्रेष्ठ मार्ग अपनाकर हिन्दुस्तान को अति शुद्ध एवं शक्तिशाली राष्ट्र बनाने हेतु अथक प्रयासरत रहो और वैदिक धर्मावलम्बी बनकर वेदोक्त प्रमाणित आधार पर अग्रसर रहते हुये समाज कल्याणार्थ पूर्ण योगदान शील रहे तथा इस पुस्तक के द्वारा हमारे वैदिक धर्म से लेकर मानव जीवन के अहम तथ्यों से प्राचीन भारतीय संस्कृति का उचित दिशा–निर्देशन समाज एवं देश को मिलेगा। आपको इसके लिए बहुत–बहुत आशीर्वाद एवं यही आशा है कि आगे भी इस प्रकार की पुस्तकों की रचना करते हुये समाज को मार्गदर्शन देते रहेंगे और सिद्ध योगेश्वर बाबा श्री मस्तनाथ जी आपके भविष्य को प्रगति प्रदान करें।

शुभेच्छुक :

(महन्त श्री चाँदनाथ जी योगी)
उप सभापति (योगी महासभा)
श्री मठ अस्थल बोहर मठाधीश्वर
रोहतक (हरियाणा)
भूतपूर्व विधायक बहरोड (राज०)

आशीर्वचन

प्रिय शिष्य योगी शुक्राईनाथ
शुभाशीर्वाद!

अति हर्षोल्लास हो रहा है कि हमारी नाथ सम्प्रदाय के योगी पूर्व में भी और आज भी अपनी मेहनत से समाज जागृति एवं जनसेवा जैसे अन्यान्य कार्य कर राष्ट्र में शिक्षा के साथ–साथ सनातन संस्कृति की वैदिक शास्त्रोनुकुल परम्पराओं का अध्ययन कर हमारी प्राचीन सभ्यता को सुयोग्य एवं शक्तिशाली सिद्ध कर हिन्दुत्व को घातक धर्मविरोधी विषैले तत्वों से मुक्ति दिलाने हेतु हर सक्षम प्रणाली एवं प्रमाण सहित दिशा–निर्देश करने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका प्रस्तुत कर रहे हैं तथा पूर्ण योगदान अपनी शाश्वत राष्ट्र सभ्यता को पश्चिमी देशों की ओर से व कुछ इस्लामिक संगठनों की ओर से फैलाई जाने वाली कुकृत्यों की करतूतों जैसे (यूरोप देशियों का वेदों पर व्यंग्य तथा अमेरिका द्वारा पवित्र श्री मद्भागवत गीता का अपमान एवं अन्य काफी देशों का स्वयं की आधुनिकता की खोज पर अभिमान व्यक्त करते हुये भारत को अपमानित करने की जालसाजी का षड़यन्त्र आदि) इत्यादि को वैदिकता के माध्यम से मुँहतोड़ जबाब देने का अपनी पुस्तकों, प्रवचनों तथा भिन्न–भिन्न गतिविधियों से राष्ट्र के बच्चे–बच्चे को मजबूत शक्तिशाली धैर्य एवं अटूट आत्मविश्वास की स्थापना करने में भगवान श्री गोरक्षनाथ जी द्वारा प्रदत्त बौद्धिक शक्तियों का सम्पूर्ण राष्ट्र के प्रति सदुपयोग कर रहे हैं तथा एक बाल योगी की इस पुस्तक (**अतीत का प्रतीक**) का वैदिक विधान यही सत्यता प्रमाण सहित प्रकट करता है। अतः मुझे नाथ पंथ के ऐसे योगियों से यही आशा है कि वे अपने धर्मानुकूल रहते हुये राष्ट्र को अपने यज्ञ रूपी जीवन की ज्वाला में अखण्ड परिश्रम रूपी आहुति को डालते हुये अपने श्री योगाचार्य गुरु गोरक्षनाथ जी की गरिमा को यशस्वी रखते हुये अपने भावों द्वारा अपना एवं संस्कृति का कल्याण मार्ग ही चुनित कर संलग्न रहे और अखण्ड ब्रह्माण्ड को अपने लक्ष्य द्वारा प्रकाशमान करें।

इसी के साथ पृष्ठाभाव में ज्यादा कुछ न लिखते हुये अपनी कलम को सूचकता के साथ विराम देता हूँ तथा एक बार पुनः शुभ आशीर्वाद देता हूँ।

शुभेच्छुक :

(महन्त योगी श्री चेताईनाथ जी)
महामंत्री योगी महासभा
श्री गुरु गोरक्षनाथ मन्दिर, अपर रोड, हरिद्वार (उत्तराखण्ड)

आशीर्वचन

प्रिय योगी शुक्राईनाथ
शुभाशीर्वाद!

अति प्रसन्नता हो रही है कि नाथ योगी अपनी संस्कृति के प्रति जागरुक है एवं प्राचीन ख्यालों को धारण किये हुये हैं जैसे कि योगी शुक्राईनाथ की इस पुस्तक में अल्प शब्दों में वैदिकता तथा संस्कृति का प्रेम मानवता के लिए कूट–कूट कर प्रमाणानुसार भरा है जिसको सम्पूर्णतया भारतीयता के दायरे में रहकर पूर्ण स्वरूप दिया गया है। इस प्रकार की रचनाओं से हमारे बाल योगी अपने सतगुरु प्रेरणा से कृपापात्र बनकर हिन्दुस्तान के लिए एक अति विशाल मूल्यवान कार्य कर रहे हैं और इनके मजबूत हौसले से तथा दृढ़ निश्चय से नाथ सम्प्रदाय भारत वर्ष में अग्रणीय एवं सर्वथा सामयिक सन्देश से सैद्धान्तिक हानि को नष्ट कर पूर्ण गोरक्ष मूल मन्त्र की स्थापना कर रही है एवं इनकी रचना मानव जाति के उद्धार के लिए महत्वपूर्ण योगदान सिद्ध होगी।

इसी के साथ एक बार पुनः हार्दिक मन से इस कृति को समाज में लाने हेतु योगी जी का अभिवादन करता हूँ तथा गुरु गोरक्षनाथ जी से यशस्वी भविष्य की कामना करता हूँ।

शुभेच्छुक :

योगी विलासनाथ

(डॉ० महन्त विलासनाथ जी)
पुस्कालय अध्यक्ष
योगी महासभा, हरिद्वार

आशीर्वचन

प्रिय गुरुभाई
योगी शुक्राईनाथ जी

अतिशय एवं चारों ओर नजर दौड़ाने पर यही गंग धारा प्रतीत होती है कि हमारा हिन्दुस्तान एक निराला एवं गजब प्रकृतिशील है जिसकी महिमा प्रभु कृति ब्रह्माण्ड में अवर्णनीय एवं अखण्ड शक्तिशाली है। जहाँ वेद–शास्त्र एवं पवित्र गीता का ज्ञान देने के लिए परमात्मा स्वयं अवतरित हुये वहीं नाना रूपों में परमेश्वर हमारी मातृभूमि भारती माँ को कृतार्थ करने हेतु स्वयं कही राम बनकर पाप विनाश कर धर्म स्थापना करने हेतु तथा कही प्रहलाद बनकर राक्षसी प्राकाष्ठा को शिवत्व की परिभाषा से अवगत कर धर्म रक्षा में स्वयं बार–बार अवतरित होकर सिद्धान्तिक हानि को एक शास्वतता के सूचक में बदलकर मानव जाति एवं सम्पूर्ण सृष्टि को प्रतिपादित किया उसी महिमामयी सृष्टि के प्रति समर्पण भाव यदि प्रभु स्वयं रखते हैं और यह बात प्रमाणित भी है तो हम सबका भी योगी शुक्राईनाथ जी के विचारों से सहमत होना स्वाभाविक है तथा मैं सम्पूर्ण नाथ सम्प्रदाय के नौजवान योगियों, सन्तों, महन्तों से आग्रह करता हूँ कि हमें एकजुट होकर उपरोक्त लिखित प्रभु की सुन्दर सृष्टि के हितार्थ व्यसन को त्याग कर भारत भूमि के प्राचीनतम (अतीत के) सन्तों के मार्गदर्शन एवं ईश्वर के सानिध्य में चलकर तथा रहकर एक समृद्धिशाली राष्ट्र की स्थापना करते हुये आज के संदेश कृति की रक्षा (शास्त्रों व पौराणिक इतिहास के शुद्ध साहित्यों की सुरक्षा) में अग्रसर रहना चाहिये। इस आधार पर आप अपनी ऋचाओं से समाज को अपना कीमती एवं अमूल्य समय भेंट स्वरूप दे रहे हैं। अतः आपका तहदिल से हार्दिक अभिवादन कर बहुत–बहुत बधाई देते हुये, सद्गुरु गोरक्षनाथ जी से आपके उज्जवल भविष्य की कामना करता हूँ।

शुभेच्छुक :

महन्त सुन्द्राईनाथ

(महन्त योगी सुन्द्राईनाथ जी)
गांव अलेवा, जिला जीन्द (हरियाणा)

मेरा जनश्रुति में संदेश व उद्देश्य

स्वयं ईश्वर कृति मानव जाति को मेरा भाव भरा प्रणाम,

आज की दिशा और दशा दिन प्रतिदिन एक भयंकर रूप लेती हुई दिखाई दे रही है। साथ ही हमारा समाज अपने आप को भी भूलता जा रहा है और चारों ओर हाहाकार मचने लगा हुआ है। लेकिन हर संशय का कारण है सिर्फ 'धर्म–मर्यादा'। आज हम देखते हैं कि कोई भी सर्व साधारण व्यक्ति वस्तुतः बिना कुछ सोचे–समझे अपने आपको कुछ अल्पज्ञ ज्ञान तथा इधर–उधर के प्रवचनों द्वारा भोली जनता को लूटने में सन्तों की आड़ में आकर अपने आपको पूर्ण परमात्मा साबित करने में लगे हुये हैं तथा उनके दुष्ट कृत्यों से बदनामी केवल संतों पर बदंती जा रही है। बताना चाहूँगा कि ऐसे लोग किसी भी सम्प्रदाय व किसी भी पंथ विशेष से सम्बन्धित नहीं होते हैं जो कि अपने नाम से पूर्व में सन्त या बापू, बाबा, स्वामी तत्वदर्शी इत्यादि प्रतीक लगाकर सिर्फ सन्तों के नाम से अपना व्यापार चलाने में सतत् प्रयासशील हैं और उनके काले कारनामे समाज के सामने जब खुलते हैं तब भोली जनता उन धर्म के ठेकेदारों को सन्त समझकर जो अन्य वास्तविक संत हैं उनका भी नफरत भरी दृष्टि से स्वागत एवं शक की आकांक्षायें प्रकट करती है। इस दृष्टिकोण से बताना चाहूँगा कि आज भिन्न–भिन्न आडम्बरों की रचना कर समाज को पथ भ्रष्ट करने हेतु इन संतों की खिल्ली उड़ाने वालों की संख्या दिन–प्रतिदिन–दिन दौगुना रात चौगुना होती जा रही है। जैसे इन तथाकथित धर्मगुरुओं की आज मानो बाढ़ सी आई हुई है। अपने आपको धर्मगुरु बताने वाले ये कही कोई निर्मल दरबार में सज–धज कर बैठा हुआ जनता को गोलगप्पे खाओ तो कृपा आयेगी, पेप्सी कौन सी पीते हो, प्रत्युतर में भक्त बोलता है कि मैं मरिण्डा पीता हूँ तो तथाकथित बाबा द्वारा (किसी अन्य कम्पनी की ओर संकेत करते हुये) कहा जाता है कि आज से मरिण्डा नहीं बल्कि अन्य कोई पेय पदार्थ बताकर (जैसे–थम्सअप, ड्यू, कोकाकोला या अन्य कोई) की ये पीना शुरु करो तो कृपा आयेगी।

उसके अतिरिक्त कोई अपने आपको साईं का अवतार घोषित करने में तथा कोई अपने आपको कबीर का अवतार घोषित कर स्वयं को पूर्ण परमात्मा बताकर भोली जनता को हर तरह से शोषित कर रहे हैं। बताना चाहूँगा कि ये सब सिर्फ भारत को तोड़कर इस्लाम की स्थापना करने की साजिश के अंग हैं तथा कुछ बाहरी भ्रष्ट नीति के लोगों द्वारा ये तथाकथित धर्मगुरु मिलकर उनसे धन के लालच में ये लोग हमारी संस्कृति (जोकि पूरे संसार में सबसे अग्रणीय एवं महान है) को तोड़ना चाहते हैं। अब आप सोचते होंगे कि धर्म के साथ खिलवाड़ तथा कुछ बाहरी लोगों से मिलकर इन धर्मद्रोहियों को क्या फायदा हो सकता है? इस प्रश्नोत्तर में मैं बताना चाहूँगा कि हमारे हिन्दुस्तान को आगे बढ़ता हुआ देखकर कोई भी अन्य देश खुश नहीं है। कभी पाकिस्तान तो कभी अमेरिका, कभी अन्य देशों के साथ मिलकर इंग्लैण्ड व चीन देश हमारे देश को प्रथम कदम रखकर बार–बार दर्द दे रहे हैं। उनका यही ध्येय है कि हिन्दुस्तान को किसी भी कीमत पर बर्बाद किया जाये। इस प्रकार के दुस्संस्कारी लोग अपने बद विवेक से हमारे इन तथाकथित धर्मगुरुओं को धन एवं अन्य हर प्रकार का लालच देकर उन्हें हिन्दुस्तान की सनातन संस्कृति का नामोनिशान मिटाने के षड़यन्त्रों में शामिल कर हर अथक प्रयास करते हैं क्योंकि जब भी भारत पर संकट आया तब यही देखने को मिला है कि बाहरी ताकत एवं बाहरी लोग हमारा इतना नुकसान नहीं कर पाये जितना की हमारे ही लोगों ने हमारे साथ गद्दारी कर विदेशियों का सहयोग कर हमें नुकसान में रखा। हमारा हिन्दुस्तान इतना दयालु है जिसकी कोई सीमा नहीं। हम दया करते हैं और प्रतिफल में हम आज तक धोखेबाजी ही प्राप्त करते आये हैं। इस प्रकार इस भारत की विशेषता का बाहरी देश तथा हमारे ये तथाकथित धर्मगुरु भारी मात्रा में फायदा उठा लेते हैं। अब हमें खुद ही जागरुक होना चाहिए एवं हमारी सनातन चक्षु वेद हमें क्या शिक्षा देते हैं। इस बारे में किसी भी अपने आपको पूर्ण भगवान बताकर स्वयं धर्म का नेता घोषित करने वाले इन दुकानदारों से कोई भी सामाजिक मानव किसी भी ज्ञान की आस एवं खोज में इनके द्वारा चलाई हुई किसी भी प्रणाली में भावुक होकर न जाये तथा शुद्ध श्रद्धा से अपनी मातृभूमि की धर्म परायणता को समझते हुये अपने माता–पिता की सेवा में अपना मन एकाग्र करो–इस पुस्तक को मैंने अपने आदरणीय गुरुदेव की प्रेरणा से लिखा तथा इसका मुख्य उद्देश्य यही है कि हमारे द्वारा लिखित प्रत्येक सामग्री समाज हितैषी हो एवं शास्त्रों पर आधारित होने के साथ सही प्रमाणानुसार हो जिससे कि समाज को प्रमाणित वैदिक ज्ञान शुद्ध एवं अनमोल रत्न स्वरूप प्राप्त हो

तथा आजकल समाज में कुछ ऐसे प्रश्न धर्म की नींव पर उभर रहे हैं जिनका एक–एक व्यक्ति को प्रत्युत्तर वाचिक दृष्टि से देना असंभव ही नहीं अपितु नामुमकिन है।

मैंने इस पुस्तक में अपनी लगभग तीन महिनों की कठोर निष्ठा एवं लग्नपूर्वक अनमोल समय की शास्त्रों के अध्ययन से प्रमाणानुसार खोज कर नीति के लिये इस पुस्तक को बड़े ही गौर से लिखकर ज्यादातर संशय फैलाने वाले प्रश्नोत्तर इसमें प्रमाणानुसार जड़े हैं जो कि हमारे राष्ट्र की नींव को शक्ति प्रदान करने वाले एवं प्राचीनतम अतीत का आज क्या है और अतीत में क्या था। इस प्रकार का आध्यात्मिक पुस्तक रूपी अनमोल पत्रिका लिखकर मैंने समाज को प्रमाण सहित यह कृति समर्पित करने का निर्णय किया और अब ये समाज में समर्पित कर अति प्रसन्नता हो रही है कि इस कृति से आपको अत्यन्त लाभ होगा तथा भारतीयता का वास्तविक प्रचार होगा जिसे हिन्दुस्तान का बच्चा–बच्चा स्वीकार करेगा और समझेगा कि आज की नई सारी लगभग तकनीकीकरण का जिक्र हमारे वेदों में धरती पर सर्वप्रथम हुआ है और हम हर तरह की सामर्थता वाले हमेशा से सभी देशों में आगे हैं तथा बताना चाहूँगा कि आज की विज्ञान जितनी आगे प्रगति कर चुकी है और कर रही है ये सब हमारे वेदों का ही प्रताप है क्योंकि जिन तकनीकों को विज्ञान आज तैयार कर रही है वे सब तकनीक एवं खोज हमारे वेदों में आज से काफी पूर्व की सदियों में प्रमाणित हो चुका है जिसके ठोस प्रमाण मैं आपको इस पुस्तक में दे रहा हूँ एवं विज्ञान की हद भी बता देना चाहता हूँ कि विज्ञान हमारे वेद–शास्त्रों से ही उत्पन्न हुआ एवं आज अपने जन्मदाता अध्यात्म को ही कुछ विज्ञानकारक ठुकराने की भारी कोशिश कर रहे हैं। जबकि आध्यात्म उनके सामने एक बज्र के समान चुनौती बना हुआ है। लेकिल साथ ही वर्तमान में कुछ ज्यादा संख्या में वैज्ञानिक खोज उपरान्त आध्यात्म को नतमस्तक होते भी नजर आ रहे हैं। हमें मिलकर आध्यात्म शक्ति मजबूत बनाना चाहिए एवं हमारे रोम–रोम से हिन्दुत्व की चहकता के साथ शुद्ध आध्यात्म की खुशबू आनी चाहिए क्योंकि धर्म रक्षा में शस्त्र ही नहीं अपितु शास्त्र की दृष्टि से भी जो युद्ध में अपने विरोधी को पराजित करे वही सच्चा हिन्दु शब्द धारण कर अलंकृत हो सकता है अर्थात उसे ही हिन्दू कहते हैं।

(योगी शुक्राईनाथ)

भागीरथी गंगा माँ की महिमा व हमारा कर्तव्य

गंगा माता भारत की सबसे अधिक एवं प्राचीन नदियों में से एक प्रमुख निराली भूमिका रखने वाली (अहम स्थान रखने वाली) एक अद्‌भुत नदी भी है। गंगा भारत की सर्वाधिक पवित्र पुण्यसलिला सरिता ही नहीं बल्कि चिरकालीन ऋषित्व की शक्ति भी है। पूरी दुनिया के अति प्राचीनतम ग्रन्थ ऋग्वेद में भी पवित्र गंगा मैया का उल्लेख मिलता है। वैदिक नदी सूक्त में गंगाजी को सर्वप्रथम स्थान दिया है तथा स्कन्द पुराण के मतानुसार ज्येष्ठ मास के शुक्ल पक्ष की दशमी के दिन महाराज भागीरथ के दृढ़ संकल्प एवं कठोर तप के फलस्वरूप गंगा जी पृथ्वी पर अवतरित हुई थी।

कथा के अनुसार, सूर्यवंशी सत्यवादी राजा की आठवीं पीढ़ी में राजा सगर का जन्म हुआ था। राजा सगर की दो रानियाँ थी जिनका नाम केशिनी और सुमति था। केशिनी के पुत्र का नाम असमंजस था और दूसरी रानी सुमति के साठ हजार पुत्र थे और सम्पूर्ण सुमति पुत्र अहंकारी और उद्‌दण्ड प्रकृति के थे। आगे चलकर असमंजस का पुत्र अंशुमान सदाचारी और सात्विक प्रवृति का हुआ और सर्वगुण सम्पन्न था। महाराज सगर ने एक बार अश्वमेघ यज्ञ का अनुष्ठान किया। तदोपरान्त इन्द्रदेव ने यज्ञ के अश्व (घोड़े) को चुराकर कपिल मुनि के आश्रम में बांध दिया। उस समय ऋषिवर ध्यानस्थ समाधि में थे। इसलिए उन्हें ज्ञात नहीं हुआ। कुछ समयापरान्त सगर के पुत्र जब अश्वमेघ यज्ञ के खोये हुये घोड़े को खोजते हुये कपिल मुनि के आश्रम में पहुँचे तो उन्होंने घोड़े को बंधा हुआ देखा। मुनि पर शकपूर्वक दृष्टि डाली और उनकी समाधि भंग कर दी। अतः मुनिवर ने जैसे ही आँखें खोली उनकी दृष्टि के तेज से सभी सगर पुत्र भस्म हो गये। कथा के अनुसार आगे जब राजा सगर के पौत्र अंशुमान कपिल मुनि के आश्रम में आये और उन्होंने अपनी विनय से अर्थात विनय के परिश्रम से मुनिवर को प्रसन्न कर लिया। तत्पश्चात् मुनि ने अंशुमान को घोड़ा ले जाने की अनुमति दे दी तथा अंशुमान के आग्रह करने पर मुनि ने बताया कि सगर पुत्रों की

सद्गति केवल गंगाजल के स्पर्श से ही हो सकती है।

लेकिन गंगा तो पृथ्वी पर थी ही नहीं। राजा सगर के बाद अंशुमान को राज्य की गद्दी का राजतिलक किया गया परन्तु अंशुमान को अपने चाचाओं की मुक्ति की चिन्ता निरन्तर सताती रहती थी। अपने पुत्र दिलीप को कुछ समय बाद राज्य–भार सौंपकर वह गंगाजी को स्वर्ग से पृथ्वी पर लाने हेतु तप करने वन में चले गये। तपस्या में ही उनका देहावसान हो गया। तदोपरान्त महाराज दिलीप ने भी अपने पुत्र भागीरथ को राज्यभार देकर अपने पिता के मार्ग का अनुसरण किया। परन्तु इस कठिन प्रयास में रहते–रहते उनका भी प्राणान्त हो गया।

इसके बाद राजा दिलीप के पुत्र भागीरथ ने घोर तप किया जिससे सन्तुष्ट होकर ब्रह्माजी, गंगा जी को भूलोक पर भेजने हेतु रजामन्द हो गये। तब उस समय यह प्रश्न उठा कि गंगाजी के वेग को पृथ्वी पर नियन्त्रित कौन करेगा?

तभी भागीरथ ने कठोर तप के द्वारा भगवान त्रिलोकी के नाथ शंकर को खुश किया और फिर जब गंगा मैया पृथ्वी पर अवतरित हुई तो उसे भगवान शिव ने अपनी जटा में नियन्त्रित किया और एक जटा के जरिये पूर्णतया गंगा को पृथ्वी पर उतार दिया। भागीरथ आगे–आगे चले, गंगा पीछे–पीछे। अपने सारे मार्ग को हरा–भरा शस्य श्याम–शीतलाम करते हुये गंगा जी कपिल मुनि के आश्रम में पहुँची। सगर पुत्रों का उद्धार करके गंगा माता, सागर में आ मिली। राजा भागीरथ के द्वारा गंगा को पृथ्वी पर लाया गया था। इसलिए इसे भागीरथी नाम से भी लोक विख्यात माना जाता है।

गंगा अवतरण के दिन ज्येष्ठ मास की शुक्ल पक्ष की दशमी तिथि और हस्त नक्षत्र था। मान्यता है कि गंगावतरण की इस पावन तिथि के दिन गंगा जी में स्नान करने से मन, वचन और कर्म के द्वारा किये जाने वाले प्रमुख दश पाप मिट जाते हैं। इसी कारण दश पापों को हरने वाली यह तिथि 'दशहरा' के नाम से प्रसिद्ध हो गई।

इस दौरान जब हम ब्रह्म पुराण में बह रही ग्यान–गंगोत्री में स्नान करते हैं तो पाते हैं कि ब्रह्म पुराण में लिखा है कि–

ज्येष्ठ मासि सिते पक्षे दशमी हस्तसंयुता।
हस्ते दश पापानि तस्माद् दशहरा स्यूता॥

अर्थात–यानि ज्येष्ठ मास के शुक्ल पक्ष की दशमी हस्त नक्षत्र से संयुक्त होने पर मानव के दस प्रमुख दोषों (बुराईयों) को हर लेती है। अर्थात् इसे दशहरा के नाम से भी जाना जाता है।

इसी प्रकार जब हम मनुस्मृति की ज्ञान–गंगोत्री में डूबकी लगाते हैं तो उसमें भी पाते हैं कि दस दोष कौन से हैं और उनका विस्तार–आईये जानते हैं। मनुस्मृति–मनुस्मृति में बताया है कि बिना दिये किसी की चीज ले लेना (चोरी, लूटमार), हिंसा, परस्त्रीगमन, ये तीन शारीरिक दोष हैं, वही कटु वचन, असत्य बोलना, पीठ पीछे बुराई करना, निष्प्रयोजन प्रलाप (बकवास) करना, ये चार वाचिक दोष यानी वाणी के दोष हैं। अन्याय से धन हड़पने का दिचार रखना, किसी का बुरा होने की सोचना और नास्तिकता, मानसिक पाप कहे जाते हैं। यह दस दोष। शास्त्रों के अनुसार ये दसों दोष ज्येष्ठ मास की शुक्ल पक्ष की दशमी को गंगा स्नान से समाप्त हो जाते हैं।

पद्म पुराण का कथन है कि गंगा स्नान करने से पूर्व जो मनुष्य सच्चे मन से बुरे काम करने से तौबा कर लेता है और दुबारा पाप करने के विचार त्याग देता है। गंगा की पतित पावनी शक्ति से वह पाप मुक्त होकर सद्गति का अधिकारी बन जाता है। जैसे संस्कृत में कहा है कि–

पाप बुद्धि परित्यज्य गंगायां लोकमातरी।
स्नानं कुरूत हे लोका यदि सद्गति मिच्छय॥

ब्रह्मवेवर्त पुराण एवं देवी भागवत में वर्णित कथाओं के हिसाब से गंगा जी पृथ्वी पर कलियुग के मात्र पांच हजार वर्ष तक रहने के लिए बाध्य थी। जिसकी अवधि आज (2013) से 114 साल अर्थात् एक सदी और चौदह साल पहले पूरी हो चुकी थी और आज गंगा मैया यदि पृथ्वी पर विद्यमान है तो वह हमारे पूर्वजों के सत्कर्मों का सुफल है और अब यदि हम चाहे कि गंगाजी हमारे और हमारे आने वाले भारतवर्ष की पीढ़ियों के कल्याणार्थ पृथ्वी पर रहे तो हमें उसी दृढ़ संकल्प के साथ इन्हें प्रदूषण और अवरोधों से मुक्त करना होगा, जिस इच्छाशक्ति एवं कठोर तप से राजा भागीरथ

गंगा जी को पृथ्वी पर लाये थे। हम सबको भागीरथ के जीवन से सुशिक्षा लेकर उनकी तरह परिश्रम करते हुये भागीरथ भूमिका निभानी चाहिए। गंगा को पवित्र एवं गंगा सेवा में अग्रसर रहना चाहिये। हमें एकजुट होना चाहिए। तभी हमें गंगा सुलभ होगी। अविरल और निर्मल गंगा। गंगा दशहरा के दिन से यदि भागीरथ के समान दृढ़ संकल्पवान बनें। तभी यह दशहरा पर्व हमारे लिए सार्थक होगा। हमें हमारा कर्तव्य समझकर जीवन जीना चाहिए और आने वाले भारतवर्ष के लिए एक मिशाल बनना चाहिए जिससे कि हमारे जीवन को सूत्र रूप में हमारा भारत प्रयोग में ले सके और हमारा जीवन धन्य हो सके। संस्कृति का अंश बन सके। इसके साथ ही कहना चाहूँगा–

सर्वे भवन्तुः सुखिनः सर्वे सन्तु निरामया।
सर्वे भद्राणी पश्यन्तु, मा कश्चित दुखः भागभवेत॥

नोट–हरिद्वार में हरकी पौड़ी के पास स्थित गुरु गोरक्षनाथ मन्दिर में अपने पूज्य गुरुदेव (श्री प्रातः स्मरणीय योगी चेताई नाथ जी महाराज वर्तमान महामंत्री योगी महासभा हरिद्वार) जी के श्री चरणों में तथा पवित्र गंगा माता के पावन सानिध्य में रहकर मैंने (लेखक) इस पुस्तक की रचना की। इसलिये गंगा महत्व उचित समझ कर यह गंगा वृतान्त सर्वप्रथम लिखने को मन भावुक हुआ।

अगस्त 2013

आदर्श वैदिक ज्ञान

ऋग्वेद की प्रमाणित प्रत्यक्ष ज्ञान–

1. एक सद् विप्रा बहुधा वदन्ति।

अर्थ–उस एक परमात्मा को विद्वान पुरुष अनेक नामों से पुकारते हैं।

(प्रमाण–ऋग्वेद मण्डल–1/सूक्त–164/मन्त्र 46 में)

2. एको विश्वस्य भुवनस्य राजा।

अर्थ–वह (परमेश्वर) सब लोकों का एकमात्र स्वामी है।

(प्रमाण–ऋग्वेद 6/36/4 में)

3. यस्तन्न वेद किमृचा करिष्यति।।

अर्थ–जो उस ब्रह्म को नहीं जानता वह वेद से क्या करेगा।

(प्रमाण–ऋग्वेद 1/164/39 में)

4. स गच्छध्वं सं वदध्वम्।

अर्थ–मिलकर चलो और मिलकर बोलो।

(प्रमाण–ऋग्वेद 10/191/2 में)

5. शुद्धाः पूता भवत यज्ञियासः।

अर्थ–शुद्ध और पवित्र बनो तथा परोपकार जीवन वाले हों।

(प्रमाण–ऋग्वेद 10/18/2 में)

6. स्वस्ति पन्थामनु चरेम।

अर्थ–हम कल्याण मार्ग के राहगीर हों।

(प्रमाण– ऋग्वेद 5/51/15 में)

7. देवानां सख्यमुप सेदिमा वयम्।

अर्थ–हम देवो अर्थात् विद्वानों की मैत्री करें।

(प्रमाण–ऋग्वेद 1/89/2 में)

8. उप सर्प मातरं भूमिम्।

अर्थ–मातृभूमि की सेवा करो।

(प्रमाण–ऋग्वेद 10/18/10 में)

9. भद्रं भद्रं क्रतुमस्मासु धेहि।

अर्थ–हे प्रभु! हम लोगों में सुख और कल्याण मयी उत्तम संकल्प ज्ञान और कर्म को धारण कराओ।

(प्रमाण–ऋग्वेद 1/123/13 में)

यजुर्वेद का ज्ञान–

1. भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम्।

अर्थ–हम कानों से भद्र–शुभ मंगल वचन ही सुने।

(प्रमाण यजुर्वेद अध्याय नं. 25 मन्त्र नं. 21 में)

2. स ओतः प्रोतश्च विभूः प्रजासु।

अर्थ–वह व्यापक प्रभु सब प्रजाओं में ओतप्रोत है।

(प्रमाण यजुर्वेद अध्याय 32 मन्त्र 8 में)

3. मा गृधः कस्य स्विद् धनम्।

अर्थ–किसी के धन पर मत (न) ललचाओ।

(प्रमाण–यजुर्वेद अध्याय 40 मन्त्र 1 में)

4. मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे।

अर्थ–हम सब परस्पर मित्र की दृष्टि से देखें।

(प्रमाण–यजुर्वेद अध्याय 36 मन्त्र 18 में)

5. तमेव विदित्वाति मृत्युमेति।

अर्थ–उस ब्रह्म (प्रभु) को जानकर ही मनुष्य मृत्यु को लाँघ जाता है।

(प्रमाण–यजुर्वेद अध्याय 31 मन्त्र नं. 18 में)

6. ऋतस्य पथा प्रेत।

अर्थ–सत्य के मार्ग पर चलो।

(प्रमाण–यजुर्वेद अध्याय नं. 7 मन्त्र 45 में)

7. तन्मे मनः शिव सङ्कल्पमस्तु।

अर्थ–मेरा मन उत्तम संकल्पों वाला हो।

(प्रमाण–यजुर्वेद अध्याय 34, मन्त्र 1 में)

सामवेद का उत्तम मौखिक ज्ञान–

1. अध्वरे सत्य धर्माणमं कविं अग्निं उप स्तुही।

अर्थ–हिंसा रहित यज्ञ में सत्य धर्म का प्रचार करने वाले अग्नि की स्तुति करें।

(प्रमाण–सामवेद 32 में)

2. ऋचा वरेण्यं अवः यामि।

अर्थ–वेद मन्त्रों से मैं श्रेष्ठ संरक्षण मांगता हूँ।

(प्रमाण–सामवेद 48 में)

3. मन्त्रश्रुत्यं चरामसि।

अर्थ–वेद मन्त्रों में जो कहा वही हम करते हैं।

(प्रमाण–सामवेद 176 में)

4. ऋषिणां सप्त वाणीः अभि अनूषत्।

अर्थ–ऋषियों की सात छन्दों वाली वाणी कहो–वेद मन्त्र बोलो।

(प्रमाण–सामवेद 577 में)

5. अमृताय आप्यायमानः दिवि इतमानि श्रवांसि धिष्व।

अर्थ–मोक्ष प्राप्ति के लिए तू अपनी उन्नति करते हुये धुलोक में उत्तम यश प्राप्त कर।

(प्रमाण–सामवेद 603 में)

6. यज्ञस्य ज्योतिः प्रियं मधु पवते।

अर्थ–यज्ञ की ज्योति प्रिय और मधुर भाव उत्पन्न करती है।

(प्रमाण–सामवेद 1031 में)

दिव्य अथर्ववेद का अखण्ड ज्ञान–

1. तस्य ते भक्ति वांसः स्याम्।

अर्थ–हे प्रभु हम तेरे भक्त हो।

(प्रमाण अथर्ववेद काण्ड नं. 6, अनुवाक नं. 79, मन्त्र नं. 3 में)

2. एक एव नमस्यो विक्ष्वीडयः।

अर्थ–एक परमेश्वर ही पूजा योग्य है और प्रजाओं में सत्युत्य है।

(प्रमाण–अथर्व काण्ड नं. 2 ,अनुवाक नं. 2, मन्त्र नं. 1 में)

3. स नो मुञ्चत्वंहसः।

अर्थ–वह ईश्वर हमें पाप से मुक्त करे।

(प्रमाण–अथर्व काण्ड नं. 4 अनुवाक नं. 23 मन्त्र 1)

4. य इत् तद् विदुस्ते अमृतत्वमानशुः।

अर्थ–जो उस ब्रह्म को जान लेते हैं वे मोक्ष पद पाते हैं।

(प्रमाण–अथर्ववेद काण्ड 9, अनुवाक नं. 10, म स नं. 1 में)

5. स श्रुतेन गमेमहि।

अर्थ–हम वेदोपदेश से युक्त हो।

(प्रमाण–अथर्ववेद काण्ड 1, अनुवाक नं. 1, मन्त्र नं. 4)

6. यज्ञो विश्वस्य भुवनस्य नाभिः।

अर्थ–यज्ञ ही सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को बाँधने वाला नाभी स्थान है।

(प्रमाण–अथर्ववेद काण्ड 9, अनुवाक 10, मन्त्र 14)

7. ब्रह्म चर्येण तपसा देवा मृत्युमपाघ्नत।

अर्थ–ब्रह्मचर्य रूपी तपोबल से ही विद्वान लोगों ने मृत्यु पर विजय

पायी है।

(प्रमाण–अथर्ववेद काण्ड 11, अनुवाक 5, मन्त्र 19)

8. मधुमति वाच मूदेयम्।

अर्थ–मैं मीठी वाणी बोलूँ।

(प्रमाण–अथर्ववेद काण्ड 16, अनुवाक 2, मन्त्र 2)

9. परैतु मृत्युरमृतं न ऐतु।

अर्थ–मृत्यु हमसे दूर हो और अमृत पद हमें प्राप्त हो।

(प्रमाण–अथर्व काण्ड 18, अनुवाक 3, मन्त्र 62 में)

10. सर्वमेव शमस्तु नः।

अर्थ–हमारे लिए जब कुछ कल्याणकारी हो।

(प्रमाण–अथर्ववेद काण्ड 19, अनुवाक 9, मन्त्र 14 में)

वेदों में भगवत्कृपा प्राप्त्यर्थ प्रार्थना

भक्ति शास्त्रों के अनुसार भगवत्कृपा के बिना मनुष्य सुख शान्ति या सफलता नहीं प्राप्त कर सकता, अतः भगवत्कृपा का अनुभव करने के लिए समस्त चराचर जगत के प्राणियों में स्थित रहने वाले भगवान को सर्वव्यापी सब सर्वान्तर्यामी जान कर जो मनुष्य सर्वत्र और सबमें देखता है महसूस करता है वही पूर्ण भगवत्कृपा का अनुभव कर सकता है। यह ऐहलौकिक, पारलौकिक सभी प्रकार के सुख–साधनों को प्राप्त कर अभ्युदय तथा निःश्रेयस्वरूप पूर्णता को प्राप्त कर सकता है। भगवत्कृपा और भगवान में कोई भेद नहीं है। अतः दोनों को अभिन्न मानकर भगवत्राधन करना चाहिए। जो मनुष्य श्रद्धा एवं विश्वास के साथ सर्वव्यापी भगवान की आराधना करता है। यह अवश्य भगवान का कृपापात्र बन जाता है। भगवान के समुख होने के कारण वह सद्धर्म, सत्कर्म और सदाचार आदि के पालन में तत्पर हो अहर्निश भगवत् आराधना में संलग्न रहता है।

तत्पश्चात यह शुद्ध–बुद्ध अर्थात् जीवन मुक्त हो जाता है। अतः भगवत्कृपा का विशेष रूप में प्राप्त करने के लिए भगवत् साधना अति

आवश्यक है।

वेदों में मंत्र दृष्टा ऋषियों द्वारा अनेक स्थलों पर भगवत्कृपा प्राप्ति के लिये प्रार्थना की गई है। ये प्रार्थना बड़ी ही उदात्त और सत्संकल्पित है। मन्त्रदृष्टा ऋषि सदा भगवतानुग्रह के प्रार्थी रहे हैं। परन्तु ये साधारण वस्तुओं के लिए भगवतानुग्रह का आह्वान नहीं करते। प्रत्युत अपने तथा मानवमाह के सर्वाङ्गीण योगश्रेय के लिए प्रभु कृपा के प्रार्थी हैं। मन्त्र दृष्टा ऋषियों द्वारा वेदों में आत्म कल्याण और लोक कल्याण के निमित भगवत्कृपा प्राप्यर्थ जो प्रार्थनाएं की गई हैं उनमें से कुछ वेद मन्त्र यहाँ मैं आपके सामने उद्धत करता हूँ। जरा देखे प्रमाणानुसार।

1. माध्वीर्गावो भवन्तु नः।

अर्थात्–हे प्रभु! हमारी गौएँ (इन्द्रियों) मधुरतापूर्ण अर्थात् संयम, सदाचार आदि के माधुर्य से युक्त हो।

(प्रमाण ऋग्वेद मण्डल नं. 1 सूक्त नं. 90 तथा मन्त्र नं. 8 में)

2. अप नः गोशुचदधम्।

अर्थात्–भगवान्! आपकी कृपा से हमारे समस्त पाप नष्ट हो जावे।

(प्रमाण–ऋग्वेद मण्डस्य नं. 1, सूक्त नं. 97, मन्त्र नं. 3 में)

3. भद्रं–भद्रं क्रतुमस्मासु धेहि।

अर्थात्–हे प्रभु! हमें सुखमय तथा मङ्गलमय और श्रेष्ठ संकल्प, ज्ञान एवं सत्कर्म धारण कराईये।

(प्रमाण–ऋग्वेद मण्डल 1, सूक्त नं. 123, मन्त्र नं. 13 में)

4. सं ज्योतिषाभूम।

अर्थात्–हे देव हम आध्यात्मिक प्रकाश से संयुक्त हो।

(प्रमाण–शुक्लयपूर्वद अध्याय 2 के मन्त्र नं. 25 में)

5. स नो बोधि श्रुधी हवमुरूष्याणो अधायतः समस्यात्।

अर्थात्–हे प्रभु! आप हमें सत्–ज्ञान दीजिए, हमारी प्रार्थना को सुनिये और हमें पापी मनुष्यों (के पापाचरण) से बचाइये।

(प्रमाण–शुक्ल यजुर्वेद मन्त्र 3 के मन्त्र 26 में)

6. अगन्म ज्योतिरमृता अभूम।

अर्थात्–हे देव! हम आपकी ज्योति को पाकर अर्थात् प्राप्त होकर अमरत्व को प्राप्त करें।

(प्रमाण–शुक्ल यजुर्वेद अध्याय 8 मंत्र 52 में)

7. देय संस्फान सहस्सापोसस्येशिषे।
तस्य नो रास्व तस्य नो धेहि तस्य ते भक्तिवासः स्याम।

अर्थात्–हे देव आप आध्यात्मिक तथा आधिदेविक एवं आधिभौतिक आदि असंख्य शाश्वति पुष्टियों के स्वामी हैं।

इसलिए आप हमें इन पुष्टियों को प्रदान करें और इन्हें हमारे अन्दर स्थापित करें जिससे हम आपकी भक्ति से युक्त हो।

(प्रमाण–अथर्ववेद क़ाण्ड नं. 6, अनुवाक नं. 79, मन्त्र नं. 6 में)

8. अयुतोऽहमयुतो मे आत्मायुतं मे चक्षुरयुक्तं मे श्रोत्रमयुतो में प्राणोऽयुतो मेंऽपानोऽयुतो में व्यानोऽयुतोऽह सर्वः।

अर्थात्–हे परमेश्वर मैं अनिन्ध (प्रशसित) बनूं। मेरी आत्मा अनिन्य बने और मेरे चक्षु, श्रोत्र, प्राण, अपान तथा व्यान भी अनिन्ध बने।

(प्रमाण–अथर्ववेद काण्ड 19, अनुवाक 51, मन्त्र 1 में)

9. अभयं मित्रादमयममित्रादभयं ज्ञातादभयं पुरो यः।
अभयं नक्तमभय दिवा नः सर्वा आशा मम मित्र भवन्तु।।

अर्थात्–हे प्रभु! हमें मित्र से भय ना हो, शत्रु से भी भय ना हो, परिचित व्यक्ति एवं सभी वस्तुओं से निर्भयता प्राप्त हो। परोक्ष में भी हमें कभी कुछ भय ना हो। दिन में, रात में और सभी समय में हम निर्भय रहे। किसी भी देश में हमारे लिए कोई भय का कारण न रहे। सर्वत्र हमारे मित्र ही मित्र हो।

वस्तुतः भगवत्कृपा का अनुभव सर्वभाव से भगवान की शरण में जाने से तथा विनम्र होकर भगवत्प्रार्थना करने से ही पूर्णतया होता है।

भगवत्कृपा से ही हमें सन्त सानिध्य प्राप्त होता है। सन्तों का साथ हमें प्रभुत्व से परिचित करवाता है। इसलिए ही कहा गया है कि–भगवत् कृपा ही केवलम्।

अर्थात्–भगवत्कृपा ही सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का सूर्य स्वरूप प्रकाश अर्थात्

अन्धकार मिटाकर ज्ञान की स्थापना करने में सर्वश्रेष्ठ सफल, सर्वोत्तम श्रोत है।

भगवत्कृपा के लिए वेदों में भी उपर्युक्त रूप से अनन्य ऋषियों द्वारा प्रार्थना की गई है तथा भगवत्प्राप्ति से मुक्ति के बड़े–बड़े उदाहरण भी हैं।

वेद कथा का एक परिचय–वैशिष्टय

देवपितृ मनुष्याणा वेदश्चक्षुः सनातनः–अर्थात वेद को देव, पितर एवं मनुष्यों का सनातन चक्षु कहा गया है।

मानव शास्त्र के निर्माता महर्षि मनु महाराज के अनुसार तीनों काल में इनका उपयोग है।

भूतं भव्यं भविष्यं च सर्व वेदात् श्रसिध्यति।

भारतीय मान्यतों के अनुसार वेद ब्रह्मविद्या के ग्रन्थ भाग ही नहीं, बल्कि स्वयं ब्रह्म है। शब्द ब्रह्म है।

ब्रह्मानुभूति के बिना ब्रह्मा का साक्षात्कार कर लिया है। वे ही वेद की स्तुति (अर्थात् व्याख्या) के पूर्ण भागी होते हैं–वेदाङ्ग निरूक्त में कहा है–

अथापि प्रत्यक्षकृताः स्तोतारो भवन्ति।

(निरूक्त 7/1/2) में

कहते हैं कि वैदिक वाङ्मय में सम्पूर्ण देवता समाये हुये हैं जो उन्हें जान लेता है वह इनमें समाहित हो जाता है। तात्पर्य है कि जिन्हें आर्ष दृष्टि प्राप्त है वे ही वेद ब्रह्मा के सत्य का दर्शन कर सकते हैं और वैदिक प्रतीकों एवं संकेतों को तथा वैदिक भाषा के रहस्य को समझ सकते हैं। इसलिए वेद की मूल चार संहिताओं–ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद के साथ ब्रह्माण्ड भाग भी संलग्न रहता है। जो इन संहिताओं की व्याख्या करता है। इस ब्रह्माण्ड भाग के बिना इन वेदों के मूल मन्त्रार्थ स्पष्ट नहीं होते।

ब्राह्मण के ब्राह्मण, आरण्यक तथा उपनिषद् ये तीन विभाग हैं, जो कि प्रत्येक संहिता के अलग–अलग हैं।

मन्त्र तथा ब्राह्मण दोनों को वेद ही कहा गया है।

मन्त्र ब्राह्मण्योर्वेदनाम धेयम्।

इनमें ज्ञान–विज्ञान के साथ–साथ आध्यात्मिक, आधिदेविक एवं आधि भौतिक समस्त पक्षों को प्रतिपादित किया गया है। अतः इतिहास में पुराणों को पाँचवां वेद माना गया है। उदाहरण–छान्दोग्य उपनिषद में कहा गया है कि–

इतिहासं पुराणं पञ्चमं वेदानां वेदम्।

इतिहास के अर्न्तगत रामायण और महाभारत आदि ग्रन्थ आते हैं तथा पुराणों में महर्षि वेदव्यास द्वारा रचित अठारह महापुराण एवं सभी उपपुराण समन्वित हैं।

वेदों का प्रादुर्भाव

वेद के प्रादुर्भाव के सम्बन्ध में यद्यपि कुछ पाश्चात्य विद्वानों तथा पाश्चात्य दृष्टिकोण से प्रभावित यहाँ के भी कुछ विद्वानों ने वेदों का समय–निर्धारण करने का असफल प्रयास किया है। परन्तु वास्तव में प्राचीन काल से हमारे ऋषि–महर्षि, मुनि, आचार्य तथा भारतीय संस्कृति एवं भारत की परम्परा में आस्था रखने वाले विद्वानों ने वेदों को सनातन, नित्य और अपौरूषेय माना है। उनकी यह मान्यता है कि वेद का प्रादुर्भाव ईश्वरीय ज्ञान के रूप में ही हुआ है। जिस प्रकार ईश्वर अनादि, अनन्त और चिर स्थाई है। उसी प्रकार वेद भी अनादि अनन्त और चिर स्थाई है। इसलिए उपनिषदों में परमात्मा को विविध पूर्ण बताकर वेदों को परमात्मा का निःस्वास कहा गया है। वेदों के महान भाष्यकार आचार्य श्री सायण ने अपने सा.भा. में लिखा है कि–

यस्य निःस्वसितं वेदा यो वेदेभ्योऽखिलं जगत्।
निर्ममे तमहं वन्दे विद्यातिर्थ महेश्वरम्।।

इस श्लोक के अर्थ से स्पष्ट है कि महर्षि/आचार्य सायण कहना चाहते हैं कि वेद ईश्वर का निःस्वास है, अतः उन्हीं परमेश्वर द्वारा निर्मित है। वेद से ही समस्त जगत का निर्माण हुआ है। इसलिये वेदों को अपौरुषेय कहा गया है। उपनिषदों में यह बात आती है कि सृष्टि के आद में परमात्म प्रभु ने

ब्रह्मा को प्रकट किया तथा उन्हें समस्त वेदों का ज्ञान प्राप्त कराया।

इस पर श्वेताश्तर उपनिषद (6/18) में कहा है कि–

यो ब्राह्मणं विद्धाति पूर्वं यो वै वेदांश्च प्रहिणोति तस्मै।

ब्रह्मा की ऋषि सन्तानों ने आगे चलकर तपस्या द्वारा इसी शब्द राशि का साक्षात्कार किया और पठन–पाठन की प्रणाली से इसका संरक्षण किया। इसलिए महर्षियों ने तथा अन्य भारतीय विद्वानों ने ऋषि–महात्माओं को मन्त्र दृष्टा माना है–**'ऋषियो मंत्रदृष्टारः।'**

वेद का ईश्वरीय ज्ञान के रूप में ऋषि–महर्षियों ने अपनी अंर्तदृष्टि से प्रत्यक्ष दर्शन किया। तदन्तर इसे सर्वसाधाण के कल्याणार्थ प्रकट किया। वेदोक्त संहिता के प्रत्येक सूक्त के ऋषि, देवता, छन्द एवं विनियोग होते हैं। वेदार्थ समझने एवं पाने के लिए इन चारों का ज्ञान रखना अति आवश्यक है।

मैंने (लेखक ने) महर्षि शौनक की कुछ अल्प पुस्तकों का सन् 2009 में कुछ अध्ययन किया जिसमें से मुझे स्मरण है कि ऋषि शौनक की एक अनुक्रमणी (11) में लिखा था कि जो ऋषि, देवता, छन्द एवं विनियोग का ज्ञान प्राप्त किये बिना वेद का अध्ययन–अध्यापन, हवन एवं भजन–याजन आदि करते हैं। उनका सब कुछ निष्फल हो जाता है और जो ऋषियों को जानकर अध्ययन आदि करते हैं उनका सर्वस्य फलप्रद होता है। ऋषि आदि ज्ञान के साथ ही जो वेदार्थ भी जानते हैं उनको अतिशय फल प्राप्त होता है। महर्षि याज्ञवल्कय और व्यास ने भी अपनी स्मृतियों में ऐसा ही लिखा है। हमारे ऋषियों ने वेदों का मनन किया अतः वे मंत्र कहलाये, छन्दों में आच्छादित होने से वे छन्द कहलाये–'मंत्रा मननात्, छन्दासि छादनात्'–ये लिखा है निरूक्त में (7/3/12)

जो मनुष्यों को प्रसन्न करे और यज्ञ आदि की रक्षा करे, उसे छन्द कहते हैं (प्रमाण–निरूक्त 1/12 में) जिस उद्देश्य के लिए मंत्र का प्रयोग होता है उसे विनियोग कहते हैं। मन्त्र में अवन्तिर या विषयान्तर होने पर भी विनियोग द्वारा अन्य कार्य में उस मन्त्र को विनियुक्त किया जा सकता है। पूर्व में आचार्यों ने ऐसा माना है। इससे ज्ञात होता है कि शब्दार्थ से भी अधिक

आधिपत्य मंत्रों पर विनियोग का है।

ब्राह्मण मन्त्रों एवं कल्पसूत्र आदि के द्वारा ऋषि, देवता आदि का ज्ञान होता है। जब हमारा ध्यान निरूक्तों में जाता है तो हमें पाते हैं कि निरूक्तकार ने लिखा है कि–देवो दानाद् धोतनाद दीपनाद वा'। (निरूक्त 7/4/15 में)

अर्थात् लोकों में भ्रमण करने वाले, पूर्णतया प्रकाशित होने वाले या भोज्य आदि पदार्थ देने वाले को देवता कहा जाता है। वेदों में मुख्यतयाः तीन प्रकार के देवताओं का वर्णन पाया जाता है जिनमें 1. पृथ्वी स्थानीय देवता अग्नि, 2. अन्तरिक्ष स्थानीय देता वायु या इन्द्र और 3. द्यु स्थानीय देवता सूर्य है।

इन्हीं की अनेक नामों से स्तुतियाँ की गई है। जिस सूक्त या मन्त्र के साथ जिस देवता का उल्लेख रहता है। इस मंत्र या सूक्त के वे ही प्रतिपादनीय और स्तवनिय है। इसके साथ ही वे सभी जड़ चेतन पदार्थों कि अधिष्ठात् देवता भी होते हैं। जिस मन्त्र में जिस चेतन पदार्थों के अधिष्ठातृ देवता भी होते हैं जिस मन्त्र में जिस देवता का वर्णन है उसमें उसी की दिव्य शक्ति अनादि काल से निहित हैं। मन्त्र में ही देवत्य शक्ति मानी जाती है। देवता का रहस्य बृहदेवता शास्त्र में प्रतिपादित है। बृहदेवता शास्त्र के प्रथम अध्याय के पाँच श्लोकों (प्रथम अध्याय श्लोक 61 से 65 तक) से पता चलता है कि इस ब्रह्माण्ड के मूल में एक ही शक्ति विद्यमान है जिसे ईश्वर कहा जाता है। वह **'एकमेवाद्वितीयम्'** है। उसी ब्रह्मा की अलग–अलग रूपों में विविध शक्तियों की अधिष्ठात् रूपों में स्तुति की गई है। नियन्ता एक ही है। इसी मूल सत्ता के विकास सारे देव हैं। अतः इसलिए जिस प्रकार एक ही धागे में माला की सारी मणियां ओत–प्रोत रहती है और उसे माला कहते हैं। इसी तरह सूर्य, विष्णु, गणेश, वाग्देवी या अदिति या जितने देवता है सबको परमात्मा रूप ही माना जाता है। हमारी भारतीय संस्कृति की यह मान्यता है कि वेद से ही धर्म निकला है। **'वेदाद्धर्मो हि निर्बभौ।'**

अब यहाँ एक प्रश्न उठता है कि वेद की नित्यता को प्रत्यक्ष प्रमाण या अनुमान प्रमाण से क्या प्रमाणित किया जा सकता है? परन्तु इस सम्बन्ध

में अपने यहाँ आचार्य एवं शंकराचार्य आदि महानुभावों ने प्रत्यक्ष एवं अनुमान प्रमाण का खण्डन कर शब्द प्रमाण को ही स्थापित किया है। प्रमाण के लिए उनके **शारीरिक भाष्य** के 2/3/1 पर। मानव बुद्धि सीमित है। क्षुद्रतम मानव मस्तिष्क अज्ञेय काल के तत्वों का कैसे प्रत्यक्ष कर सकता है और अनन्त समय की बातों का अनुमान ही कैसे लगा पायेगा? इसलिए भगवान श्री कृष्ण ने स्वयं श्रीमद् भागवत् में कहा है कि 'तस्माच्छास्त्रं प्रमाणं त कार्याकार्य व्यवस्थितो अर्थात् कार्य एवं अकार्य की व्यवस्थिति अर्थात् कर्तव्य एवं अकर्तव्य का निर्णय करने में शास्त्र ही एकमात्र प्रमाण है।

और मैं कहना चाहूँगा कि आर्य समाज के सभी शास्त्र वेद को नित्य शाश्वत और अपोरूषिय मानते हैं अर्थात् वेदों को किसी पुरुष के द्वारा निर्मित नहीं मानते। इसलिए वेद के शब्दों को हमारे धर्म–कर्म तथा जीवन के मार्गदर्शन का प्रमाण माना गया है। वेदों को सार्वदेशिक भी कहा गया है। क्योंकि वे किसी देश–विदेश की भाषा में नहीं है। जैसे परमेश्वर सर्व साधारण और सार्वदेशिक है वैसे ही इसका वेदिक ज्ञान भी सर्वविदित सार्वदेशिक है। जबकि अन्यान्य धर्म ग्रन्थ भिन्न–भिन्न देशों की, मजहबों की भाषाओं में है। ऐसा कहा जाना कोई असत्य नहीं होगा कि वेद भी देव भाषा संस्कृत में ही है।और प्राणीमात्र के लिए परम उपकारी हैं

अनन्त वेद

वेद हमारे अनन्त हैं। जब मैं (लेखक) एक बार चण्डीगढ़ से म्यूजिक का बी.ए कक्षा का इंटरव्यू देकर आ रहा था तब सन् 2011, 2012 में। इस समय मैं बस से यात्रा में था उस समय मेरे बस सीट नं. 29 थे। तभी कुछ समयापरान्त एक वृद्ध अर्थात् 65–70 साल का एक वृद्ध व्यक्ति मेरे बगल वाली सीट पर आए तो मैंने कहा श्रीमान आप मेरे पास स्थित सीट नं. 30 पर आ जाओ। यह सुनकर वृद्ध व्यक्ति मेरे बताये अनुसार बैठे। इस वृद्ध व्यक्ति ने एक बस्ता हाथ में ले रखा था। बस चलकर एक दो स्टेशन (स्टैण्ड) पार कर चुकी थी तभी अचानक मेरी नजर उसके और मेरे (लेखक

के) बीच रखी बैग (बस्ता) पर पड़ी। मुझे महसूस हुआ कि इसमें कोई ग्रन्थ है। (प्रतीत हो रहा था)। तभी मुझे भाव पैदा हुआ कि मैं खाली बैठा हूँ। इसलिए क्यों ना समय का सदुपयोग भी हो जायेगा और इस वृद्ध व्यक्ति से यह ग्रन्थ लेकर कुछ अध्ययन कर लिया जाए। फिर मैंने एकाएक उनसे आग्रह किया। वृद्ध व्यक्ति ने बिना सोचे–समझे मुझे वो ग्रन्थ दिया तभी मैंने देखा कि वो ग्रंथ तेतिरिय आरण्यक था। मैं खुशी से पढ़ने लगा–उस तेतिरिय आरण्यक में मुझे एक आख्यायिका मिली जिसमें लिखा था कि भारद्वाज ऋषि ने तीन आयुपर्यन्त अर्थात् बाल्य, यौवन और वार्धक्य में सिर्फ ब्रह्मचर्य का ही अनुष्ठान किया। जब वे जीर्ण हो गये तब इन्द्र ने उनके पास आकर कहा 'हे भारद्वाज ऋषि! यदि तुम्हें चौथी उम्र दे दू– तो तुम इस आयु में क्या करना चाहोगे? तभी ऋषि ने उत्तर दिया कि हे प्रभु में चौथी आयु में वेदों का अन्त देख लेना चाहता हूँ। अतः मुझे जितना भी जीवन दिया जायेगा मैं उससे ब्रह्मचर्य का ही अनुष्ठान करता रहूँगा। तदोपरान्त महाराज इन्द्र ने भारद्वाज ऋषि को तीन महान और विराट आकृति वाले पर्वत दिखाएँ जिनका कही ओर–छोर नहीं था। इन्द्र ने कहा–हे ऋषि ये ही तीन वेद हैं इनका अन्त तुम कैसे प्राप्त कर सकते हो? और फिर देवराज इन्द्र ने तीनों पर्वतों में से तीन मुट्ठी के लगभग पहाड़ का भाग ऋषि को देकर कहा–मानव समाज के लिए इतना ही काफी है। वेद तो अनन्त हैं। 'अनन्ता वै वेदाः' कहते हैं कि इन्द्र के द्वारा प्रदत्त ये तीन मुट्ठी ही वेदमयी के रूप में प्रकट हुई–यानि ऋग्वेद, यजुः, साम)

द्वापर युग की समाप्ति के पूर्व इन तीनों शब्द–शैलियों की संग्रहात्मक एक विशिष्ट अध्ययनीय शब्द राशि ही वेद कहलाती थी। उस समय भी वेद का पढ़ना और अभ्यास करना सरल कार्य नहीं था। कलियुग में मनुष्यों की शक्तिहीनता और कम आयु होने की बात ध्यान में रखकर वेद पुरुष भगवान नारायण के अवतार कृष्णद्वैपायन श्रीवेद व्यास जी ने यज्ञानुष्ठान आदि के उपयोग को दृष्टिगत रखकर एक वेद के चार विभाग कर दिये। ये ही विभाग आजकल ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद के नाम से प्रसिद्ध हैं। प्रत्येक वेद की अनेक शाखाऐं बताई गई हैं। मुझे विद्वानों द्वारा एवं ग्रन्थो

शास्त्रों द्वारा अति कठिन परिश्रम से अध्ययन करने पर पता चला कि यथा ऋग्वेद की 21 शाखा हैं।

यजुर्वेद की 101 शाखा हैं। सामवेद की 1001 यानि एक हजार एक शाखा है और अथर्ववेद की सिर्फ 9 (नौ) शाखा हैं। इस प्रकार कुल 1132 शाखाऐं है। इन 1132 शाखाओं में लगभग 12 शाखाऐं ही आज सामान्यतया मूल में उपलब्ध हो सकती है। जिनमें से ऋग्वेद की 2 शाखाऐं, यजुर्वेद की 6 शाखाऐं, सामवेद की 2 तथा अथर्ववेद की 2 शाखाऐं। लगभग इन्हीं के ग्रन्थ प्राप्त होते हैं। परन्तु इन 12 शाखाओं में से केवल 6 शाखाओं की अध्ययन शैली ही वर्तमान में प्राप्त है। मुख्य रुप से वेद की इन प्रत्येक शाखाओं की वैदिक शब्द राशि चार भागों में प्राप्त है। 1. 'संहिता'–वेद का मंत्र भाग, 2. 'ब्राह्मण' जिसमें यज्ञानुष्ठान की पद्धति के साथ फल प्राप्ति तथा विधि आदि का निरूपण किया गया है। 3. 'आरण्यक' यह भाग मनुष्य को आध्यात्मिक बोध की ओर झुकाकर सांसारिक बन्धनों से ऊपर उठाता है। संसार त्याग की भावना के कारण वानप्रस्थ आश्रम के लिए अरण्य में इसका विशेष अध्ययन तथा स्वाध्याय करने की विधि है। इसलिए इसे अरण्यक कहते हैं। अरण्य का अर्थ जंगल भी होता है। 4. उपनिषद–इसमें अध्यात्म चिन्तन को ही प्रधानता दी गई है। इसका प्रतिपाद्य ब्रह्मा तथा आत्म तत्व है।

वेदों के शिक्षाप्रद वृतान्त

वेदों में यत्र–तत्र कुछ शिक्षाप्रद वृतान्त तथा आख्यानों के कतिपय संकेत सूत्र भी प्राप्त होते हैं। यद्यपि कुछ आख्यान ऐतिहासिक जैसे भी प्रतीत होते है जिनके आधार पर कुछ आधुनिक विद्वान् उन इतिहासों के अनुसार वेद के काल का निर्णय करने का प्रयास करते हैं। परन्तु वास्तव में ये वृतान्त इतिहास के नहीं हैं। कुछ वृतान्तों में जगत् में सदा होती रहने वाली घटनाओं को कथा का रूप देकर समझाया गया है। जो एक प्रकार का जगत का नित्य इतिहास है। नित्य वेद में अनित्य ऐतिहासिक आख्यान नहीं हो सकते। इसी

प्रकार वेद में कुछ राजाओं के तथा भारतीय इतिहास के कुछ व्यक्तियों के भी नाम प्राप्त होते हैं। इससे यहाँ एक प्रश्न उठता है कि जब वेद अपौरुषिय है तब इनमें एतिहासिक आख्यान एवं एतिहासिक व्यक्तियों के नाम कैसे आते हैं? परन्तु वास्तव में वेद में ये शब्द किन्हीं ऐतिहासिक व्यक्तियों के नाम नहीं हैं। प्रत्युत वेद में ये यौगिक अर्थ आते हैं। मन्त्रों के आधिभौतिक, आधिदेविक और आध्यात्मिक अर्थों के अनुसार भिन्न–भिन्न अर्थ हो जाते हैं तथा कल्प–कल्पान्तर की ऐतिहासिक कथाओं का सूत्र या बीज भी इन कथाओं में रहता है। इस प्रकार ये कथाऐं एतिहासिक नहीं बल्कि नित्य और शाश्वत हैं। एतिहासिक व्यक्तियों के माता–पिताओं ने वेद के इन शब्दों के आधार पर अपनी संततियों का वही नाम रख दिया था। वेद का इन व्यक्तियों से कोई सम्बन्ध नहीं है। इन व्यक्तियों के नामों एवं वैदिक नामों में केवल श्रवणमास की ही समानता है। पूज्य सतगुरु जी बताते हैं कि वेद में इतिहास का खण्डन करते हुये 'महर्षि जैमिनि ने मिमांसा दर्शन में यही बात कही है। वास्तव में वेद के ये आख्यान हमारे जीवन को प्रभावित करते हैं। हमारे अन्दर नैतिक मूल्यों–सुसंस्कारों को जन्म देते हैं। ये कथाऐं उपदेश नहीं देती, प्रत्युत अपनी प्रस्तुति से हमारे अन्दर एक विचार उत्पन्न करती है। अच्छे बुरे का विवेचन करती हैं और हमें उस सत–असत् से परिचित कराकर हमारे मन–मस्तिष्क पर अपनी छाप भी छोड़ती है। ये कथाऐं केवल देवों–दानवों, ऋषियों–मुनियों एवं राजाओं की ही नहीं, अपितु समस्त जड़ चेतन, पशु–पक्षियों आदि से भी सम्बन्धित है। जो हमें कर्तव्य कर्मों का बोध कराती हुई शाश्वत कल्याण का मार्गदर्शन कराती है।

वेदों के प्रतिपाद विषय

सर्वविदित है कि मानव के ऐहिक और आमुष्मिक कल्याण के साधन रूप धर्म का साङ्गोपाङ्ग विश्लेषण वेदों में ही उपलब्ध है। धर्म के साथ–साथ आध्यात्म, मर्यादा, ज्ञान–विज्ञान, कला–कौशल, शिल्प–उद्योग आदि ऐसा कौन सा विषय है जिसका प्रतिपादन वेदों में न किया गया हो? यही कारण

है कि मनिषियों ने वेद को कालातित अक्षय ज्ञान का निधान कहा है। मनुष्य जाति के प्राचीनतम इतिहास सामाजिक नियम, राष्ट्र–धर्म, सदाचार, कला, त्याग, सत्य आदि का ज्ञान प्राप्त करने के लिए एकमात्र साधन सम्पूर्ण सृष्टि में सिर्फ वेद ही है।

वेद में जो विषय प्रतिपादित है वे मानव मात्र का मार्गदर्शन करते हैं। मनुष्यों को जन्म से लेकर मृत्यु तक प्रतिक्षण कब क्या करना चाहिए और क्या नहीं करना चाहिए। साथ ही प्रातःकाल जागरण से रात्रि शयन काल पर्यन्त सम्पूर्ण चर्चा और क्रियाकलाप ही वेदों के प्रतिपाद विषय हैं। इस प्रकार वेद का अन्तिम लक्ष्य मोक्ष प्राप्ति ही है। ईश्वरोपासना, योगाभ्यास, धर्मानुष्ठान, विद्या प्राप्ति, ब्रह्मचर्य पालन तथा सत्संग आदि भक्ति के साधन बतलाए गये हैं। कर्मफल की प्राप्ति के लिए पुनर्जन्म का प्रतिपादन, आत्मोन्नति के लिए संस्कारों की व्यवस्था तथा जीवन की पवित्रता के निमित भक्ष्याभक्ष्य का निर्णय करना ये सब वेदों की ही विशेषता है। कर्मकारक कूर्मकाण्ड, उपसना काण्ड और ज्ञान काण्ड–इन तीन विषयों का वर्णन मुख्यतः वेदों में मिलता है। कर्मकाण्ड में यज्ञ–याज्ञा आदि विभिन्न क्रियाकलापों का प्रतिपादन विशेष रूप से हुआ है। यज्ञ के अर्न्तगत देव पूजा देवतुल्य ऋषि–महर्षियों का संगतिकरण (सत्संग) और दान–ये तीनों होते हैं। वैदिक मंत्रों द्वारा देवताओं की तृप्ति के उद्‌देश्य से किये हुये क्रम के दान को यज्ञ कहते हैं। यज्ञ ही सृष्टि की नकारात्मक शक्ति को नष्ट कर सकारात्मक शक्ति प्रदान करता है। इससे प्राकृतिक जीवाणु एवं विषाणु उत्पन्न होकर सम्पूर्ण सृष्टि को ऊर्जावान बनाते हैं।

मन्त्रैदेवमुदिश्य द्रव्यस्य दानं यागः।।।।।

तेतिरिय संहिता में एक बात आती है कि द्विज जन्म लेते ही ऋषि–ऋण, देव–ऋण और पितृ–ऋणों का ऋणी बन जाता है। ब्रह्मचर्य के द्वारा ऋषि ऋण से, यज्ञ के द्वारा देव ऋण से, और संतति के द्वारा पितृ–ऋण से मुक्ति होती है। अतः इन ऋणों से मुक्ति हेतु ततत् प्रतिपादक अवश्यानुष्ठेय यज्ञा का सम्पादन करना चाहिए।

वेदों में आध्यात्मिक सन्देश

(महन्त चेताईनाथ जी महाराज–महामंत्री योगी महासभा)

नाथ पंथ के नाथ साधुओं के अनुसार अर्थात् नाथ संतों का वेदवित कहना है कि वेद चाहते हैं कि व्यक्ति के चितवृति रूप राज्यों में प्रतिपल पवित्र, वरेण्य एवं उर्वर विचार–सरिता (नदी) बहती रहे जिससे अन्तःकरण में सद्वृतियाँ जाग्रत होती रहे। जैसे कि मेरे सत्गुरु जी बताते हैं कि गायत्री मन्त्र का जाप 'तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्' इस मन्त्र का प्रमाण ऋग्वेद मण्डल नं. 3 सूक्त 62, मन्त्र 10 में पढ़ें)

हे सच्चिदानन्द रुप परमात्मन्! आपके प्रेरणादाई विशुद्ध तेजः स्वरुप मूल दिव्य रुप का हम अपने हृदय में नित्य ध्यान करते हैं। उससे हमारी बुद्धि निरन्तर प्रेरित होती रहें आप हमारी बुद्धि को अपमार्ग से रोककर तेजोमय पवित्र मार्ग की ओर प्रेरित करे–उस प्रकाशमय पथ का अनुसरण कर हम आपकी ही उपासना करें और हम आपको ही प्राप्त हों।

यज्ञ नित्य और नैमेतिक दो प्रकार के होते हैं। जिन कर्मों के करने से किसी फल की प्राप्ति नहीं होती और न करने से पाप लगते हैं उन्हें नित्य (यज्ञ) कर्म कहते हैं। जैसे–सन्ध्या वंदन पंच महायज्ञ आदि। पंच महायज्ञ करने से आत्मोन्नति के साथ–साथ पूर्व जन्मों के पापों से भी निवृति होती है।

सर्व गृहस्थै पञ्चमहायज्ञ अहरहः कर्तव्या।

अर्थात् सभी गृहस्थ मात्र को प्रति नित्य पंच महायज्ञ करना चाहिए। पंच महायज्ञ के अर्न्तगत में हैं–

1. ब्रह्मयज्ञ–वेदों के स्वाध्याय को ब्रह्म यज्ञ कहते हैं।
2. देवयज्ञ–अपने ईष्ट देव की उपासना, परब्रह्म परमात्मा के निमित की गई पूजा और हवन को देव यज्ञ कहते हैं।
3. भूतयज्ञ–कृमि, कीट–पतंगे, पशु और पक्षी की रक्षा एवं सेवा को भूतयज्ञ कहते हैं।

4. पितृयज्ञ–परलोकगामी पितरों के निमित पिण्डदानादि श्राद्ध एवं तर्पण को पितृयज्ञ कहते हैं।

5. मनुष्य यज्ञ–किसी भी प्रकार से पीड़ित मनुष्य की सेवा रुप मदद अर्थात् अतिथि सेवा को मनुष्य यज्ञ कहते हैं।

नैमितिक–ये कर्म मुख्यतया दो प्रकार के होते हैं–श्रोत और स्मार्त

श्रुति प्रतिपादित यज्ञों को श्रुति यज्ञ और स्मृति प्रतिपादित यज्ञों को स्मार्त यज्ञ कहते हैं। श्रोत यज्ञों में केवल वैदिक मन्त्रों का प्रयोग होता है तथा स्मार्त यज्ञों में वैदिक, पौराणिक एवं तांत्रिक मन्त्रों का भी प्रयोग होता है।

उपर्युक्त सभी प्रकार के यज्ञ सात्विक, राजसिक और तामसिक भेद से तीन प्रकार के होते हैं। जो यज्ञ निष्काम भाव से प्रभु की प्रसन्नता के लिये किये जाते हैं उन्हें सात्विक यज्ञ कहते हैं। जो यज्ञ सकाम अर्थात् किसी फल विशेष की इच्छा से किये जाते हैं उन्हें राजसिक यज्ञ कहा जाता है और जो यज्ञ शास्त्र विरुद्ध किये जाते हैं उन्हें तामसिक यज्ञ कहा जाता है।

इनमें सर्वश्रेष्ठ यज्ञ सिर्फ सात्विक यज्ञ को बताया गया है। इसका फल शास्त्रों में महान एवं सर्वोत्तमा बताया गया है।

यहाँ इस पर्यन्त एक प्रश्न उठता है कि यज्ञ आदि वैदिक कर्मों की फल श्रुति में स्वर्ग प्राप्ति की बात कही गई है। तब जो व्यक्ति स्वर्ग ना चाहता हो, केवल मोक्ष ही चाहता हो तो उसके लिये वैदिक कर्म की आवश्यकता ही क्या हो सकती है? इस प्रश्न का उत्तर मैं (लेखक) नहीं दूँगा बल्कि हमारे शास्त्र ही देंगे (प्रमाण के लिय वृहदाण्यकोपनिषद 4/4/22 के वचन से पढ़ें)

तमेतं वेदानु वचनेन ब्राह्मणा: विविदीषन्ति यज्ञेन दानेन तपसा नाशकेन।

अर्थात् ब्राह्मण लोग (विद्वान लोग) वेदाध्ययन से कामना रहित यज्ञ, दान और तप से उस ब्रह्म को जानने की इच्छा रखते हैं। इस वचन में अनाशकेन (कामना रहितेन) पद विशेष अर्थपूर्ण है। इसका यही अर्थ है कि वेदोक्त यज्ञ आदि कर्म जब आशक्ति सहित किये जाते हैं तब उनसे स्वर्ग लाभ होता है और जब आशक्ति रहित किये जाते हैं तब काम क्रोधादि से मुक्त होकर कर्ता का चित शुद्ध हो जाता है तथा वह मोक्ष का अधिकारी बन जाता है और यही ज्ञान अति पवित्र श्रीमद् भागवत् गीता में भगवान श्रीकृष्ण

जी ने भी कही है (प्रमाण के लिये पढ़ें पवित्र गीता अध्याय 18 श्लोक 5–6 में)

श्लोक– **यज्ञ दान तपः कर्म न त्याज्यं कार्यमेव तत्।**
यज्ञो दानं तपश्चैव पावनानि मनीषिणाम्।।
ऐतान्यपि तु कर्माणि सङ्ग त्यक्तवा फलानि च।
कर्तव्यानीति मे पाथ निश्चितं मतमुतमम्।।

अर्थात् यज्ञ, दान, तप आदि कर्म त्याज्य (छोड़ने योग्य) नहीं है, अवश्य करणीय हैं क्योंकि वे मनीषियों को (महान आत्माओं को) शुद्ध/पावन करते हैं। इन कर्मों को भी आसक्ति और फल इच्छा का त्याग करके करना चाहिए। यही मेरा सुनिश्चित उत्तम मत है। यहाँ उपनिषद के 'अनाशकेन' पद को ही गीता के 'सङ्ग त्यक्त्वा फलानि च' शब्दों ने विशत किया है। अतः जो मनुष्य अपना आत्यान्तिक कल्याण चाहता है अर्थात् जन्म–मरण के बन्धन से मुक्त होना चाहता है उसे वैदिक कर्मकाण्ड के फलरुप स्वर्ग भोग की इच्छा न रखते हुये निष्काम भाव से भगवान की प्रसन्नता के लिए ही कर्म करते रहना चाहिए। यह बात मुण्डकोपनिषद (1/2/7) में भी स्पष्ट हुई है।

मनुष्य का मन अनेक कुकर्मों से मलिन हो जाने के कारण इन सभी मलों को हटाने के लिए सत्कर्मों का किया जाना आवश्यक है। सत्कर्म कराना ही वैदिक कर्मकाण्ड का उद्देश्य है। नाथ सम्प्रदाय के अर्थात् गुरु गोरक्षनाथ जी के द्वारा प्रचलित इस नाथ परम्परा का प्रबुद्ध वर्ग समाज को वैदिकता धारण करवाने का अखण्ड निर्णय कर अपनी मेहनत से वेदिकता को स्थापित एवं वेदोक्त ज्ञान से धर्म संस्कृति की नींव को संरक्षणता प्रदान करने में प्रगतिशील है। नाथ सन्तों के अनुसार वेदोक्त कर्मों के करने से चित्त शुद्ध होता है और तब ब्रह्मविद्या अथवा ज्ञान की बातें श्रवण करने से फलवती होती है।

वेदोक्त कर्मों को करने के लिए वर्णाश्रम धर्म का पालन करना भी अत्यन्त आवश्यक है, अनिवार्य है। वेदों में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और क्षुद्र–इन चार वर्णों के कर्मों का व कर्तव्यों का भी निरुपण है।

वेदों की भावना है कि हम ईश्वर को अनन्य एकाग्रता से उपासना

से प्रसन्न करें और वे हमारे योग–क्षेमादि को सर्वदा सम्पन्न करें। संसार को धारण करने वाले भगवान हमारी अभिलाषायें आपको छोड़कर अन्यत्र न कही गई है, न कदापि कही जाती ही है। अतः आप अपनी कृपा द्वारा हमें सब प्रकार सामर्थ्य से सम्पन्न करे। (प्रमाण के लिए ऋग्वेद नं. 8, सूक्त 24 मंत्र 11 में पढ़े)

ज्ञान की प्रकाष्ठा पर भक्ति का उदय होकर भक्ति के सदा परिपूर्ण होने से वृति में मुक्ति की वासना भी नहीं उठती है। ऐसा जीवन ही वैदिक जीवन संस्कृति का आदर्श है–**यो वः शिवतमो रसस्तस्य भाजयतेह नः। उशतिरिव मातरः।**

(प्रमाण के लिए अथर्ववेद में काण्ड नं. 1, अनुवाद नं. 5, मन्त्र नं. 2 तथा ऋग्वेद मण्डल नं. 10, सूक्त नं. 9, मन्त्र नं. 2 में देखें)

अर्थात् प्रभो! जो आपका आनन्दमय भक्तिरस है आप हमें वही प्रदान करें, जैसे शुभकामनामयी माता अपनी संतान को संतुष्ट एवं पुष्ट करती है वैसे ही आप मुझ पर कृपा करें।

इस प्रकार वेद में ईश्वर से प्रार्थना की गई है कि वह हमें सन्मार्ग पर लायें, हमारे अन्तःकरण को पावन–उज्जवल कर आत्मश्रेय के सर्वोच्च–शिखर को प्राप्त करा दें–भद्रं मनः क्रणुष्व। (प्रमाण सामवेद संख्या नं. 1560 में)

यानि हे प्रभु! आप हमारे मन को कल्याण मार्ग में प्रेरित करें। वेदों की मान्यता है कि तपः पूत जीवन से ही मोक्ष की प्राप्ति होती है जैसे कि अथर्ववेद में आया है कि–

यस्मात्पक्वादमृतं सब भूव यो गायत्र्या अधिपतिर्बभूव।
यस्मिन्वेदा निहिता विश्वरूपास्तेनौदनेनाति तराणि मृत्युम्।।

(प्रमाण के लिये अथर्ववेद के काण्ड 4, अनुवाक 35, मन्त्र 6 में)

अर्थात् जो प्रभु गुणगान करने वाली गायत्री द्वारा अपने जीवन की आत्मशुद्धि कर स्वामी बन गया है जिसने सब पदार्थों का निरुपण करने वाले ईश्वरीय ज्ञान–वेद को पूर्णतः धारण कर लिया है। वही मानव वेद ज्ञानरूपी पके हुये ओदन के ग्रहण–सदृशं मृत्यु को पारकर मोक्ष पद प्राप्त करता है। जो मानव–जीवन का अन्तिम लक्ष्य है। गायत्री मन्त्र को वेद का

सार सर्वस्व कहा गया है। यह सम्पूर्ण मंत्रों में सर्वोपरि माना जाने वाला मंत्र है। इसमें परब्रह्म परमात्मा से सद्बुद्धि प्रदान करने की प्रार्थना की गई है। नाथ कहते हैं कि मात्र गायत्री मन्त्र के जाप से भी व्यक्ति को वेद के स्वाध्याय का फल प्राप्त हो जाता है। अतः स्नान सन्ध्या के अनन्तर पवित्रावस्था में यथा साध्य द्विज को गायत्री मन्त्र का जाप अवश्य करना चाहिए। इस मंत्र के जप में भगवती गायत्री या अपने इष्ट देव का ध्यान करना चाहिए। वेद भगवान का संविधान है। इनमें अनेकों ऐसे मंत्र है जिनसे शिक्षा प्राप्त कर मनुष्य आध्यात्म के सर्वोत्तम शिखर पर पहुँच सकता है। वेदों में इस लोक को सुखमय तथा परलोक को कल्याणमय बनाने की दृष्टि से मनुष्य मात्र के लिए आचार–विचार के पालन का विधान तो किया ही गया है। साथ ही आध्यात्मिक साधना वाचक अनेक निन्दित कर्मों से दूर रहने का निर्देश दिया गया है। जैसे–**अक्षैर्मा दीव्यः।**

अर्थात् जुआ मत खेलो। (प्रमाण ऋग्वेद मण्डल 10, सूक्त 34, मंत्र नं. 13 में देखें)

दूसरा उदाहरण जैसे–**मा गृधः कस्य स्विद्धनम्**

अर्थात् पराये धन का लालच मत करो। (प्रमाण यजुर्वेद अध्याय नं. 40, मंत्र 1 में)

मा हिंसीः पुरुषान्पशूश्च।

अर्थात् मनुष्य और पशुओं को मन, कर्म एवं वाणी से किसी भी प्रकार का कष्ट ना दो। (प्रमाण अथर्ववेद काण्ड 6, अनु. 2 में)

देव दुर्लभ मनुष्य शरीर का प्रयोजन सकल दुःख, निवृत्ति एवं परमानन्द की प्राप्ति है। वेदों के प्रति पूर्ण निष्ठा रखकर उनके द्वारा बताये गये मार्ग पर चलकर ही मानव इसे प्राप्त कर सकता है।

मानवमात्र के लिए अन्तिम उपदेश है–'सत्य पर चलो अर्थात् सत्य के मार्ग पर चलो'

ऋतस्य पथा प्रेत (यजुर्वेद अध्याय 7, मन्त्र 45 पर)

यही है वेद का आध्यात्मिक संदेश।

वेद का अनुसरण कर हमें हमारा जीवन वेदोक्त करना चाहिए।

वेद में योग विद्या

सभी धर्म–कर्म, योग, ज्ञान, वैराग्य तथा भक्ति आदि सत्कर्म वेदों द्वारा निर्दिष्ट हैं और उनसे ही निःसृत माने गये हैं। यहाँ तक कि भविष्य में होने वाले ज्ञान–विज्ञान तथा कला–साहित्य आदि का भी वेदों में उत्स प्राप्त है–

'भूतं भव्यं भविष्यं च सर्व वेदात् प्रसिध्यति।'

(मनु. 12/97)

यहाँ संक्षेप में योगमूलक कुछ वैदिक मन्त्रों का निर्देश किया जा रहा है। 'योग' शब्द का अर्थ है जोड़ना अथवा युक्त करना, समाहित अथवा एकाग्र होना। अपने आत्मा को परमात्मा के साथ युक्त करना ही 'योग' है और जिस साधन से इस प्रकार का योग एवं सायुज्य प्राप्त होता है, वह भी 'योग' कहलाता है। योग–भाष्य के रचयिता महर्षि व्यास कहते हैं कि पूर्ण एकाग्रता से परमात्मा में समाहित हो जाना, समाधि की अवस्था प्राप्त कर लेना भी योग है। अर्थात् 'योग' शब्द साधन और साध्य दोनों का वाचक है।

ऋग्वेद के एक मन्त्र में यह शब्द इन्हीं अर्थों में प्रयुक्त हुआ है–

यस्मादृते न सिध्यति यज्ञो विपश्चितश्चन।
स धीनां योगमिन्वति।।

(1/18/7)

अर्थात् जिन (इन्द्राग्नि) देवता के बिना प्रकाशपूर्ण ज्ञानी का जीवन–यज्ञ भी सफल नहीं होता, उसी में ज्ञानियों को अपनी बुद्धि एवं कर्मों का योग करना चाहिये, उसी देव में उन्हें अपनी बुद्धि और कर्मों को अनन्य रुप में एकाग्र करना चाहिये। उनकी बुद्धि उस देव के साथ तदाकार हो जाती है और वह उनके कर्मों में भी ओतप्रोत हो जाता है।

योग के इस प्रधान लक्षण का प्रतिपादन यजुर्वेद के 11वें अध्याय के प्रथम पाँच मन्त्रों में अत्यन्त स्पष्ट और सरल शब्दों में किया गया है। कुछ उदाहरण यहाँ दिये जा रहे हैं–

युञ्जानः प्रथमं मनस्तत्त्वाय सविता धियः।
अग्नेर्ज्योतिर्निचाय्य पृथिव्या अध्याऽभरत्॥

व्याख्या–सबको उत्पन्न करने वाले परमात्मा पहले हमारे मन और बुद्धि की वृत्तियों को तत्व की प्राप्ति के लिये अपने दिव्य स्वरूप में लगायें तथा अग्नि आदि इन्द्रियाभिमानी देवताओं की; जो विषयों को प्रकाशित करने की सामर्थ्य है, उसे दृष्टि में रखते हुए बाह्य विषयों से लौटाकर हमारी इन्द्रियों में स्थिरतापूर्वक स्थापित कर दें; जिससे हमारी इन्द्रियों का प्रकाश बाहर न जाकर बुद्धि और मन की स्थिरता में सहायक हो।

युक्तेन मनसा वयं देवस्य सवितुः सवे
स्वर्ग्याय शक्त्या।

व्याख्या–हम लोग सबको उत्पन्न करने वाले परमदेव परमेश्वर की आराधनारूप यज्ञ में लगे हुए मन के द्वारा परमानन्द की प्राप्ति के लिये पूर्ण शक्ति से प्रयत्न करें। अर्थात् हमारा मन निरन्तर भगवान् की आराधना में लगा रहे और हम भगवत्प्राप्ति जनित अनुभूति के लिये पूर्ण शक्ति से प्रयत्नशील रहें।

युक्त्वाय सविता देवानूस्वर्यतो धिया दिवम्।
बृहज्योतिः करिष्यतः सविता प्र सुवाति तान्॥

व्याख्या–वे सबको उत्पन्न करने वाले परमेश्वर मन और इन्द्रियों के अधिष्ठाता देवताओं को; जो स्वर्ग आदि लोकों में एवं आकाश में विचरने वाले तथा बड़ा भारी प्रकाश फैलाने वाले हैं। हमारे मन और बुद्धि से संयुक्त करके हमें प्रकाश प्रदान करने के लिये प्रेरणा करें, ताकि हम उन परमेश्वर का साक्षात् करने के लिये प्रकाश फैलाते रहें। निद्रा, आलस्य और अकर्मण्यता आदि दोष हमारे ध्यान में विघ्न न करें।

इसी प्रकार ऋग्वेद (1/86/9–10) में कहा गया है–

यूयं तत् सत्यशवस आविष्कर्त महित्वना।
विध्यता विद्युता रक्षः॥
गूहता गुह्यं तमो वि यात विश्वमत्रिणम्।
ज्योतिष्कर्ता यदुश्मसि॥

व्याख्या–इन मन्त्रों में गौतम ऋषि मरुत्–देवताओं का आवाहन कर उनसे ज्योति–प्राप्ति की प्रार्थना करते हैं–'हे सत्य के बल से सम्पन्न मरुतो!

तुम्हारी महिमा से वह परमतत्व हमारे सामने प्रकाशित हो गया। विद्युत के सदृश अपने प्रकाश से राक्षस का विनाश कर डालो। हृदय–गुहा में स्थित अंधकार को छिन्न–भिन्न कर दो, जिससे वह अन्धकार सत्य की ज्योति की नाव में डूबकर तिरोहित हो जाये। हमारी अभीष्ट ज्योति को प्रकट कर दो।'

यहाँ मरुत्–देवताओं से योगपरक अर्थ करने में पञ्चप्राण–प्राण, अपान, समान, उदान और व्यान का भी ग्रहण हो सकता है। इन पर पूर्ण प्रभुत्व की प्राप्ति से योगाभ्यासी को शक्ति के आरोहण का अनुभव और परमतत्व का साक्षात्कार प्राप्त होता है। साक्षात्कार से जिस ज्योति के दर्शन होते हैं, वही योगी का अभीष्ट ध्येय है।

कहना चाहूँगा कि अथर्ववेद के एक मन्त्र में राजयोग की प्राणायाम–प्रणाली से होने वाली शक्ति के आरोहरण का वर्णन प्रतीकात्मक भाषा में किया गया है।

पृष्ठात् पृथिव्या अहमन्तरिक्षमारुहमन्तरिक्षाद्दिवमारुहम्।
दिवो नाकस्य पृष्ठात् स्वर्ज्योतिरगामहम्॥ (4/14/3)

व्याख्या–इस मन्त्र में पृथ्वी, अन्तरिक्ष और द्यौ क्रमशः अन्न, प्राण और मन की भूमिकाओं के प्रतीक हैं तथा स्वर्ज्योति मन और वाणी से परे स्थित, वाङ्मनस–अगोचर विज्ञानमय भूमिका का प्रतीक है। प्राणायाम से सिद्धि प्राप्त साधक कहता है 'मैंने पृथ्वी के तल से अन्तरिक्ष के लिये आरोहण किया, अन्तरिक्ष से द्युलोक में और आनन्दमय द्युलोक से आरोहण करके मैं स्वर्लोक के ज्योतिर्मयधाम में पहुँच गया। पातञ्जलयोग दर्शन के अनुसार ये भूमिकाएँ विक्षिप्त, असम्प्रज्ञात और कैवल्य कहलाती हैं।

चेतना के उत्तरोत्तर आरोहणक्रम में योगी को जो अनुभूतियाँ होती हैं, उनका वेदों में अनेकत्र वर्णन किया गया है–

अष्टाचक्रा नवद्वारा देवानां पूरयोध्या।
तस्यां हिरण्ययः कोशः स्वर्गो ज्योतिषावृतः॥

(अथर्व. 10/2/31)

व्याख्या–इस मन्त्र में यह कहा गया है कि 'आठ चक्रों और नौ द्वारों से युक्त हमारी यह देहपुरी एक अपराजेय देवनगरी है। इसमें एक तेजस्वी कोश है, जो ज्योति ओर आनन्द से परिपूर्ण है।

वैदिक योग–साधना का ध्येय है आत्मा का परमात्मा के साथ ऐक्य। (एकीकरण) उसके लिये साधक की अभीप्सा निम्नलिखित मन्त्र में सुन्दर ढंग से व्यक्त की गयी है–

यदग्ने स्यामहं त्वं त्वं वा घा स्या अहम्।
स्युष्टे सत्या इहाशिषः॥

(ऋक्. 8/44/23)

व्याख्या–अर्थात् 'हे अग्निदेव! यदि मैं तू हो जाऊँ अर्थात् सर्वसमृद्धि सम्पन्न हो जाऊँ या तू में हो जाय तो इस लोक में तेरे सभी आशीर्वाद सत्य सिद्ध हो जायें।

इस प्रकार यहाँ वेदमन्त्रों के आधार पर योग–सम्बन्धी कुछ रहस्यात्मक तत्व संक्षेप में निर्दिष्ट किये गये हैं। प्राचीन या अर्वाचीन सभी योगमार्ग वेदमूलक ही हैं, जो वेदों में योग के कल्याण के लिये निर्दिष्ट हुए हैं। इस सूक्त के उपदेशों के आधार पर प्राणिमात्र के प्रति मैत्री–भावना और समदृष्टि का अभ्यास करना चाहिये। यह अभ्यास सिद्ध हो जाने पर अपने हृदय के सभी सांसारिक सम्बन्धों और अलौकिक सम्बन्धों को भगवान् के साथ ही जोड़ दें। अनेक वेदमन्त्रों में यह उपदेश दिया गया है कि हमें माता–पिता, पुत्र–पुत्री, मित्र, कलत्र, बन्धु–बान्धव आदि सभी सम्बन्ध अपने सच्चे और अनन्यबन्धु भगवान् के साथ ही जोड़ने चाहिये, संसारी जनों के साथ नहीं। सांसारिक आसक्तियों को दूर करने और भगवान् में परम अनुरक्ति तथा रति उत्पन्न करने का इससे सरल एवं सरस मार्ग अन्य कोई नहीं है। हृदय के सभी भावों और निखिल कामनाओं को भगवान् की ओर मोड़ देने से ही उनके साथ सारूप्य, साधर्म्य, सायुज्य और ऐकात्म्य सहजतया प्राप्त हो सकता है। ये सम्पूर्ण वेद शिक्षा ही है।

वेदों में विमान (प्रमाणिक)

यूरोपीय विद्वानों के मतानुसार वेदों में उच्च सभ्यता के नमूने नहीं हो सकते। विकासवाद के अनुसार वेद एक प्राचीन और प्राथमिक मनुष्यों के

गीत ही हो सकते हैं। वस्तुतः विकासवाद के सिद्धान्तों को सत्य मानकर ही वेद–विषयक ऐसी अटकलें लगायी जाती हैं। मेरे विचार से तो वेद इसके विकासवाद की सत्यता पर ही कुठाराघात करते हैं। इसका एक प्रमाण वेदों में विमानों का वर्णन होना है। यदि वैदिक युग में विमान बनाये जाते थे, तो उस काल की सभ्यता अवश्यमेव उच्च होनी चाहिये। निम्न प्रमाणों से पाठक स्वयं निश्चित कर सकते हैं कि वेद में 'उड़नखटोलों' का वर्णन है या कवियों की 'कपोल–कल्पना' का चित्र है अथवा 'सच्चे विमानों' का वर्णन?

ग्रिफिथ ने ऋग्वेद के चौथे मण्डल के 36वें सूक्त की इतनी बुरी तरह हत्या की है कि वह बोधगम्य ही नहीं रहा है। यदि महर्षि सायण के भाष्य से काम लिया गया होता तो इस विवादग्रस्त प्रश्न पर अवश्य प्रकाश पड़ता। जो हो, इस ऋग्वेदीय सूक्त के निम्नलिखित मन्त्रार्थों एवं भावानुवादों से सरलतापूर्वक निर्धारित किया जा सकता है कि जिस वायुयान के विषय में वर्णन मिलता है, वह काल्पनिक है या वास्तविक। मैंने सायण के अनुवाद को ही अपनाया है। स्वयं देखिए।

'हे रैभव! तुमने जिस रथ का निर्माण किया, उसमें न तो अस्त्रों की आवश्यकता है और न धुरी की। यह तीन पहियों का प्रशंसनीय रथ वायुमण्डल में विचरण करता है। तुम्हारा यह आविष्कार महान् है। इसने तुम्हारी तेजोमयी शक्तियों को पूज्य बनाया है। तुमने इस कार्य में स्वर्ग एवं मर्त्यलोक, दोनों को दृढ़ एवं धनी बनाया है' (ऋक्. 4/36/1)

'प्रखरबुद्धि रैभव ने ऐसे सुन्दर घूमने वाले रथ का निर्माण किया, जो कभी गलती नहीं करता। हम इन्हें अपना सोमरस पान करने के लिये आमन्त्रित करते हैं।' (ऋक्. 4/36/2)

'हे रैभव! तुम्हारी महत्ता का लोहा बुद्धिमानों ने मान लिया है' (ऋक्. 4/36/3)

'विशेष तेजस्वी ऋभुओं द्वारा जिस रथ का निर्माण हुआ, वे जिसकी रक्षा या जिसे प्यार करते हैं, उस रथ की मानव–समाज में प्रशंसा है' (ऋक्. 4/36/5)

ऋभुओं द्वारा निर्मित रथ एक ऐसा अभूतपूर्व आविष्कार था, जिसकी प्रशंसा जन–साधारण एवं विद्वान्, दोनों द्वारा होती थी। इस रथ ने संसार में एक सनसनी फैला दी थी।

इस वायुयान से किसी प्रकार की आवाज नहीं होती थी। यह अपने निश्चित पथ पर वायुमण्डल में विचरण करता था और इधर–उधर न जाकर सीधे अपने गन्तव्य स्थान को जाता था।

'यह रथ बिना अश्व के संचालित होता था' (ऋक्. 1/112/12 और 10/120/10) यह स्वर्ण रथ त्रिकोण एवं त्रिस्तम्भ था।

रिभुओं ने एक ऐसे रथ का निर्माया किया था, जो 'सर्वत्र जा सकता था' (ऋक्. 1/20/3; 10/39/12; 1/92/28 और 129/4; 5/75/3 और 77/3, 85/29; 1/34/12 और 47/2; 1/34/2 और 118/1–2 तथा 157/3) तथा संशय निवाणार्थ कुछ और मन्त्र देखिये–

'हे धनदाता अश्विनो! तुम्हारा गरुडवत् वेगवान् दिव्य रथ हमारे पास आवे। यह मानव–बुद्धि से भी तेज है। इसमें तीन स्तम्भ लगे हैं, इसकी गति वायुवत् है' (ऋक्. 1/47/2)। 'तुम अपने त्रिवर्ण, त्रिकोण सुदृढ़ रथ पर मेरे पास आओ' (ऋक्. 1/118/2)

'अश्विनी! तुम्हें तुम्हारा शीघ्रता से घूमने वाला विचरणशील यन्त्र युक्त गरुडवत् रथ यहाँ ले आवे' (ऋक्. 1/118/4)।

यहाँ विल्सन तथा कुछ दूसरों ने अश्वों द्वारा संचालित पतंग अर्थ किया है, विमान नहीं; किन्तु इन उदाहरणों से यह अर्थ नहीं निकलता है। कम से कम यह तो साफ वर्णित है कि अश्विनों का रथ यन्त्र–कला से निर्मित किया गया था और उसके संचालनार्थ अश्व नहीं लगे थे (देखिये प्रमाण ऋक्. 1/112/12 और 1/120/10) एक दूसरे स्थान में सर्वत्र विचरणशील सुन्दर रथ का वर्णन है। (ऋक्. 1/20/3)

'ऋभुओं! तुम उस रथ से आओ, जो बुद्धि से भी तेज है, जिसे अश्विनों ने तुम्हारे लिये निर्मित किया है' (ऋक्. 10/39/12)।

'तुम्हारा रथ स्वर्णाच्छादित है इसमें सुन्दर रंग है। यह बुद्धि से भी तेज एवं वायु के समान वेगशाली है। (ऋक्. 5/77/3)।

'अश्विनो! अपने त्रिकोण–त्रिस्तम्भ रथ के साथ आओ' (ऋक्. 1/47/2)।

ऋग्वेद में वायु तथा समुद्र वाले दोनों रथों का साफ–साफ वर्णन है। (ऋक्. 1/182/5)

'तुमने तुग्र–पुत्रों के लिये महासागर पार करने के निमित्त जीवन संयुक्त उड़ते जहाज का निर्माण करके तुग्र–पुत्र भुज्यु का उद्धार किया और आकाश से उतर कर विशाल जल–राशि को पार करने के लिये रथ तैयार किया।'

इसी प्रकार यजुर्वेद में भी वायुयान–यात्रा का बड़ा ही मनोहर वर्णन है।–

'आकाश के मध्य में यह विमान के समान विद्यमान है। द्युलोक, पृथिवी और अन्तरिक्ष–इन तीनों लोकों में इसकी अबाध गति है। सम्पूर्ण विश्व में गमन करने वाला और मेघों के ऊपर भी चलने वाला, यह विमानाधिपति इहलोक तथा परलोक के मध्य में सब ओर से प्रकाश देखता है' (वाजसनेयिसंहिता 1/59)

ऋग्वेद और यजुर्वेद के मन्त्रों से ही इस पुस्तक में विमानों की विद्यमानता के प्रमाण मैंने दिये हैं। अथर्ववेद में भी स्पष्ट प्रमाण मिलते हैं, परन्तु लेख के बढ़ने के भय से वे यहाँ नहीं दिये गये। आशा है कि वैदिक सभ्याता के इस नमूने पर पाठक विचार करेंगे तथा विदेशियों को प्रमाण सहित मुँहतोड़ जबाब देने का धैर्य रखेंगे।

धर्म के विधान एवं वास्तविक धर्म

नाथ सम्प्रदाय का धर्म सिद्धान्त अति प्राचीन है तथा नाथ सम्प्रदाय दुनिया की सबसे अलग एवं अलबेली ज्ञान की खान एवं धर्मधारी है। इस सम्प्रदाय के मुख्य प्रेरणास्त्रोत **श्री शम्भूजति गुरु गोरक्षनाथ जी महाराज** हैं। उनके बाद आज तक अनेकोंनेक विशिष्ट एवं सिद्ध महासिद्ध विभूतियाँ नाथ सम्प्रदाय में प्रकट होकर ज्ञान प्रचार–धर्म प्रचार कर परमात्मा तत्व को प्राप्त

हुई हैं और अति चिरकाल से आदि–अनादि काल से इस सनातनी नाथ सम्प्रदाय के योगी हमें समय–समय पर जाग्रति देते हुये हमारी धर्म नीति को प्रोत्साहन प्रदान कर दिव्य गति की ओर अग्रसित करते आये हैं। नाथ योगियों, सिद्धों ने हमें सिखाया है कि धर्म मानव जीवन की आचार संहिता है जो कि हमें कर्तव्य पालन की शिक्षा देता है। धर्म को नाथ योगियों ने आकाश की संज्ञा देते हुये कहा है कि धर्म आकाश के समान हैं। जैसे घटाकाश व मठाकाश कहने से आकाश अनेक नहीं होता, वैसे ही विभिन्न नाम होने से धर्म भी अनेक नहीं हो जाते। धर्म वह है जिसे सभी लोग, समस्त समाज, सभी मतालम्बी सर्वोत्कृष्ट रूप में स्वीकार करते हैं। धर्म को सभी मत–मतान्तर सुख एवं मोक्ष की प्राप्ति का कारण व प्रतीक मानते हैं। धर्म के लिए सभी सम्प्रदायों वाले सन्त–योगी–महात्मा–साधु–विद्वान लोग उपदेश देते हैं कि सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड की सर्वोत्कृष्ट वस्तुओं को परित्याग कर धर्म को ग्रहण एवं धारण करो।

सभी ज्ञानी ज्ञान उपदेश देते हैं कि धर्म से सुन्दर कोई वस्तु नहीं है। कुछ लोगों का मत है कि धर्म को धारण करने से मनुष्य देव तुल्य हो जाता है अर्थात् देवता बन जाता है। पवित्र श्रीमद् भागवत गीता, वेद, उपनिषद व दर्शन शास्त्र अनन्त चिरकाल से हमें धर्मोपदेश देते आ रहे हैं कि स्वयं को पूर्ण स्वाधीन रखना, अनैतिक कार्य न करना, किसी जीव को दुख न देना, हिंसा ना करना, प्राणीमात्र को अपने समान समझना, अति होने पर ही गुस्सा करना, अन्यथा नहीं करना, सहनशील बनना, परनारी पर कुदृष्टि कभी नहीं डालना, संकटोपरान्त धीरज धारण किये रहना, द्वेष न रखना व विनाशकारी अभिमान धारण कर राक्षस नहीं बनना आदि–आदि यही वास्तविक धर्म का सिद्धान्त है। नाथ जी कहते हैं कि ये धर्म सिद्धान्त नाथ सम्प्रदाय ही नहीं अपितु सभी सम्प्रदायों का सिद्धान्त है। जिस समय मनुष्य में ये उपयुक्त गुण पूर्ण रूप से विद्यमान थे। वह दौर सतयुग कहलाता था। जब मानव स्वभाव व व्यवहार में अन्तर आया और सिद्धान्तों व मूल्यों में ह्रास हुआ तो वह युग त्रेता व द्वापर नाम से पुकारा गया। वर्तमान की दशा देखो आज वर्तमान में श्रेष्ठ गुण मनुष्य में बहुत कम प्रतिशत में विद्यमान है। अत्यधिक हिंसक

प्रवृति के दुर्गुणों का प्रभाव ज्यादा होने से इसे हम कलयुग कहते हैं। वस्तुतः जीवन में जो कुछ भी सार है वही धर्म है। धर्म आत्मा और परमात्मा के मध्य घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित करने वाला माध्यम है। वह हमारे सभी कर्मों, व्यवहार, करूणा, क्रोध, स्नेह, दया, त्याग और तप आदि का बोधन है। इसी के सहारे सभी मानव व्यवहार होते हैं और समस्त मानव कृतियाँ अपना कार्य करती हैं। धर्म का सबसे बड़ा साधन आत्म मर्यादा है। आत्म मर्यादा की सिद्धियाँ आत्म गौरव है और आत्म गौरव का आधार सदाचार है। आत्म मर्यादा एक ऐसा धन है जो कि सुख और विपत्ति दोनों ही स्थितियों में सदैव समान रहता है। नाथ योगियों ने समाज को समय–समय पर अंधविश्वास तथा आडम्बरों से बचाकर वास्तविकता की ओर अग्रसर किया और धर्मोपदेश से धर्म सिद्धांत पर चलना सिखाया। विकृति से बचाकर सनातन धर्म की नींव को मजबूत रखा तथा आज भी मेहनतपूर्वक समाज को सुशिक्षा प्रदान कर धर्म प्रचार में अपना जीवन काफी नाथ योगी सभ्यता को समर्पित हो रहे हैं।

वास्तविक धर्म का जब युधिष्ठर ने भीष्म पितामह से पूछा कि धर्म क्या है? तब उन्होंने उत्तर दिया कि जिसमें अभ्युदय (लौकिक उन्नति) और निःश्रेयस (पारलौकिक उन्नति यानि मोक्ष) सिद्ध होते हो वही धर्म है। धर्म अधोगति में जाने से रोकता है और जीवन की रक्षा करता है। धर्म ने ही समस्त प्रजा को धारण कर रखा है इसलिए जिससे धारण और पोषण सिद्ध हो वही धर्म है। जो अहिंसा से युक्त हो वही धर्म है। भीष्म पितामह के इस विश्लेषण का मतंव्य है कि जो सन्तुलन बनाए रखे वही धर्म है। पर धर्म जब अशक्त हो जाता है तभी अन्याय, अनीति, दुष्कर्म बढ़ते हैं तथा सज्जन लोगों को कष्ट सहने पड़ते हैं। इस उपरान्त परमात्मा अपनी सृष्टि के सन्तुलन व सृष्टि को सुव्यवस्थित करने के लिए तथा जगत कल्याण हेतु किसी तेजस्वी और पराक्रमी पुरुष के रूप में पूरी व्यवस्था को बदलने के लिए अवतार लेता है। इस तरह अवतरित होना दया, शील, ज्ञान, तप और सत्यता की रक्षा करना परमात्मा का धर्म अर्थात् कर्तव्य है। युद्ध के लिए जब क्षत्रिय अर्जुन पूरे दल–बल के साथ तैयार होकर युद्ध भूमि में पहुँचते हैं और वहाँ पहुँचकर वह बिना लड़े ही युद्ध भूमि से पलायन करने को उद्यत होते हैं

तब उसी क्षण योगीराज प्रभु श्रीकृष्ण उन्हें उनके क्षत्रिय धर्म की प्राकाष्ठा याद दिलाते हैं। कृष्ण जी जानते थे कि सारे प्रयास असफल हो चुके हैं। अब शान्ति की स्थापना का एकमात्र संकल्प युद्ध होगा और सतोगुण, रजोगुण, तमोगुण के अस्तित्व में सन्तुलन स्थापित नहीं होगा। इसलिए वह युद्ध की अनिवार्यता के बारे में अर्जुन को कर्म, ज्ञान व भक्ति के अनेकों मार्गों से समझाते हैं। इतना ही नहीं अपना विराट रूप दिखाकर (सम्पूर्ण सृष्टि को धारण एवं क्षय करने वाले वे श्रीकृष्ण ही है। इस वास्तविकता से अवगत कराकर उन्हें विश्वास भी दिलाते हैं कि जो अपने कर्मों को परमात्मा को अर्पित कर उसके फल की चिंता किये बगैर अपने धर्म का पालन करता है वही सच्चा धर्म योगी है। हर पंथ में मानव का धर्म है सत्य बोलना। दूसरों पर अत्याचार ना करना। **वैज्ञानिक आईस्टीन** ने कहा था कि विज्ञान मनुष्य को अपरिमित शक्ति तो प्रदान कर सकता है परन्तु वह उसकी बुद्धि को नियंत्रित करने की सामर्थ्य नहीं प्रदान कर सकता। मनुष्य की बुद्धि को प्रयुक्त करने की शक्ति तो धर्म ही दे सकता है। धर्म सर्वशक्तिमान है।

संगीत साकार जीवन है

प्रभु का दिया हुआ हमारा मानव जीवन ही सर्वश्रेष्ठ जीवन है। अतः हम कह सकते हैं कि संगीत जीवन यानी गीत ही जीवन है जिसने इसे सुर, ताल और लय से गाया वही समृद्धिशाली एवं सुखी रहा है। वैसे तो अनेकोंनेक संतों और ज्ञानियों ने जीवन को अलग–अलग ढंग एवं मतानुसार परिभाषित किया है। अनुभवानुसार–जैसे किसी के लिए ये मानव जीवन संघर्ष है, किसी के लिए दुःखों का सागर और किसी के लिए भोग–विलास का माध्यम। इसके साथ–साथ कोई सुखी मन से रहता है। अर्थात् जीवन जीता है। तो कोई दुःखों को आमन्त्रित करता हुआ जीता है। जिसने जिन्दगी को ईश्वर (परमात्मा) की देन समझा और सत्मार्ग अपनाकर जीवन यापन किया उसी मानव का जीवन श्रेष्ठ है तो वास्तव में जीवन एक गीत है। इसमें सुर लय और ताल तीनों का मेल होता है अतः जरूरी है कि हम श्वास के हर पल पर

जीवन गीत गुनगुनाते रहे। यदि हम अपने मन के तारों को झनझनाते चले और परमात्मा तत्व (परम तत्व) को स्मरण करते रहे तो जीवन गीत अत्यन्त ही सुरीला होगा। हमारे जीवन में सुख और दुःख दो पहलु हैं। दोनों ही परमपिता जगदीश्वर की देन हैं। यही शान्तित्व का सुख अर्थात् शान्ति भी है। लेकिन केवल हमें अपने मन की भावनात्मक गतिविधियों को उज्जवल बनाना है जिससे जीवन में हमें वास्तविक मधु और विष को परखने की प्राकृतिक शक्तियाँ मिल जायेगी। हमारा जीवन अमृत्यु को प्राप्त होने लगेगा और हमारे अन्दर सात्विकता निवास करेगी–हमारे जीवन के साथ मुख्यतः चार घटक जुड़े हुये हैं जैसे–काम, क्रोध, मोह और लोभ। लेकिन हम अपने अन्दर आध्यात्म कृत दृष्टिकोण की अखण्ड ज्योति प्रज्जवलित करले तो चारों ओर प्रकाश की अनुभूति पायेंगे। हमें कर्तव्य का ज्ञान होगा और हम सुखी हो जायेंगे अर्थात् जीवन सुखमय हो जायेगा और इस जीवन के साथ देवता और राक्षस दोनों जुड़े हैं। यानि राम और रावण। इस दौरान हम यदि रावण भाव को अपने अन्दर से निकाल दें तथा मन की चंचलता को शिवत्व (शाश्वतता) की ओर अग्रसर करे। तो दुःख हमारे निकट भी नहीं आयेंगे। आध्यात्मिकता से दूषित तत्व नष्ट हो जायेंगे और हमारे मन की शान्ति हेतु देवत्व का आविर्भाव होने लगेगा।

जीवन में फूल भी हैं और कांटे भी हैं। हमें गुरु प्रेरणा से फूल और कांटों को एक साथ गुलशन (गुलदस्ते) में सजाना चाहिए और बिना किसी का तिरस्कार करे हमें आगे बढ़ना चाहिए। इससे हमें अनुभव होगा कि मानव जीवन क्या है। मानव जीवन सुख की बहती हुई धारा है। यदि हम सद्गुरु ज्ञान गंगोत्री में स्नान कर अपना आचरण शुद्ध कर लेवें तो जीवन शान्ति एवं सुख को प्राप्त होगा, जीवन के पथ पर कभी ठोकर मिलती है तो कभी मखमली घास भी। यदि हम दूसरों की राह से ठोकर हटाते चलेंगे तो सबका पथ (रास्ता) सरल हो जायेगा। सुखद हो जायेगा और हमें ज्ञात होगा कि हम जिसे अपना समझते हैं वो अपना है ही नहीं। यह पूर्ण जानकारी अनुभव पूर्वक मिलने पर हमें कभी कष्ट होगा ही नहीं–इससे जीवन एक गीत की भांति अमर हो जायेगा। अर्थात् संगीतज्ञ हो जायेगा।

जीवन की पहेली

हमारा मानव जीवन सर्वश्रेष्ठ जीवन है तथा नारायण के बाद सबसे बुद्धिमान केवल मानव ही है। मानव जीवन एक पहेली है। जीवन को पथिक जितना खोजता है वह उतना ही उसे अमूल्य पाता है। जीवन का हर एक–एक पल अरबों–खरबों की सम्पत्ति से कहीं अधिक एवं अनन्त मूल्यवान है। लेकिन इस महत्वपूर्ण बल को समझने की क्षमता होनी चाहिए। इस संसार में ऋषि–मुनियों की मेहनत और लग्न जिससे आज हम अग्रसर होते हैं। अति अमूल्य है। सिद्धों ने, संतों ने, ज्ञानियों ने पल–पल का सदुपयोग कर धर्म के पथ पर अनुसरण करते हुये उन्होंने ज्ञान का भण्डार पाया तथा उसे सम्पूर्ण प्राणियों के लिए उपलब्ध करवाया। साहसी थे हमारे ऋषि–मुनि। साहसियों, पराक्रमियों और वीरों ने दुनियाँ का अपने विवेक के बल एवं सत्य की भक्ति से रूप ही बदल दिया। वैज्ञानिकों ने मानव के लिए यहीं इसी धरती पर स्वर्ग का सुख खोज कर हमें दिया। लेकिन कुछ पथभ्रष्ट लोगों ने इसे नर्क बना दिया। लोग अमानवीय प्रवृत्तियों के बीच सुख की लहरें गिनने में आत्म विभोर हैं वे मानवता विरुद्ध कार्य कर स्वयं को छल रहे हैं। तामसिक व हिंसक मनोवृत्ति वाले ऐसे लोगों के दुष्कर्मों के कारण ही मानवता कलंकित होती जा रही है। हमारे वैज्ञानिक जो कि रात दिन खोजबीन में टक–टकी लगाकर जुटे रहते हैं और एक से एक कठिन से कठिन खोज अर्थात जाँच कर पूर्णतया शोधन करते हैं। ये वैज्ञानिक कहते है कि विज्ञान की उपलब्धि बस इतनी ही है कि हम मानो सागर (अथाह समुद्र) में से एक चिड़ियाँ की चोंच भर पानी ले रहे हैं और हमारे प्रखर एवं प्रचण्ड तीक्ष्ण बुद्धि वाले विस्तृत सन्त–महात्मा भी यही मानते हैं कि प्रभु का ज्ञान एवं धर्म असीम है। कोई इसका पार नहीं है। ज्ञान को जितना खोजेंगे चाहे कितने ही जीवन गवाँ दो फिर भी ये शेष ही रह जायेगा। ज्ञान अखण्ड हैं हर शर्त में भी खोजें; तो भी कहीं अधिक एवं अपार रूप में शेष रह जायेगा।

ज्ञान के आगे प्रेम–भक्ति और समर्पण की सीड़ियाँ हैं। विचित्र बात तो यह है कि लोग हिंसा और अहंकार को ही गले लगाये रहते हैं। जबकि

गुरु गोरक्षनाथ जी कहते हैं कि हे मानव, हिंसा और अभिमान ये तो विनाशकारक तत्व है। जो जीवन को व्यर्थ करते हैं। ऐसी मानसिकता वाले लोगों को जीवन जीने की पहेली कभी भी समझ में नहीं आ सकती। जीवन में एक–एक क्षण आनन्द की अनुभूति का पर्व है जिसे केवल अनुभव करने वाले ही जानते हैं और अपने अनुभव से बताते हैं कि आत्मा ही इस पवित्र जीवन की पहेली है एवं हर प्रकार अनुभव पूर्वक दिशा–निर्देश देते हैं जिससे प्राणी अपने गंतव्य (गति) को प्राप्त होते हैं।

सृष्टि रचना पालन और संहार करने वाले उस सर्वशक्तिमान ईश्वर परमपिता परमात्मा का ही अंश हमारी आत्मा है।

तो सोचो–आत्मा ही आत्मा से कैसे घृणा रख सकती हैं। घृणा तो एक घातक एवं कलंकित विचार है। पागलपन है। प्रेम ही शाश्वत सत्य है। अपने प्रति आप जैसा सकारात्मक भाव रखते हैं। ठीक दूसरों के प्रति भी हमें वैसा ही सार्थक एवं सकारात्मक भाव रखना चाहिए। यही आत्म अनुशासन है। हम सभी को आत्म सुधार की दिशा में अग्रसर होना चाहिए और विकारों को जीवन से मुक्त करने का प्रयास करते रहना चाहिए। फिर भी कोई विकार दूर न हटे तो समझो आपके प्रयास में कोई कमी रह गई। क्योंकि सच्ची श्रद्धा एवं लगन से किया हुआ प्रयास कभी असफल नहीं होता। हम जितना जीवन की गहराईयों में जायेंगे हमारा जीवन उतना ही श्रेष्ठ गहराईयों से गुजर कर हमें नया ज्ञान देगा और हम अनुभवी होंगे। तभी हमारे जीवन की पहेली आसानी से सुलझ सकती है।

जीवन एक पहेली है। सतगुरु शरण ही इस पहेली (उलझे हुये सूत रूपी जीवन) को सुलझाने में हमारी सबसे बड़ी सार्थक मदद करते हैं। गुरु ही सच्चे जीवन की राह बताकर हमें कृतार्थ करते हैं।

ज्ञान की महत्वता

हमारी मानवीय संस्कृति के सर्वांगीण विकास के लिए सबसे अधिक जरूरी आवश्यकता केवल किताबी ज्ञान की ही नहीं है अपितु मानवीय संस्कारों और ब्रह्मज्ञान (ज्ञान) की सहजता अति आवश्यक है। क्योंकि इससे

ही हमारी आचरण की गति संतुलित होती है। हमारे आचरण हमारे ज्ञान का परिचय करा देते हैं। जैसे हमारा उठना–बैठना, खाना–पीना और हमसे जुड़ी छोटी–छोटी इस प्रकार गतिविधियाँ जो दैनिक जीवन में दैनिक क्रियायें होती हैं। ये सब हमारे मानवीय एवं अमानवीय आचरणों से सीधा सम्बन्ध रखती हैं। ये क्रियायें समाज को बता देती हैं कि हमारा आचरण किस स्तर का है। इसलिए हमें सज्जनता धारण करनी चाहिए। क्योंकि सज्जनता ही पारसमणी है। जो अपने सानिध्य में आये हुये व्यक्ति को अपने प्रभाव में ले लेती है। यदि हमारे पास किसी भी प्रकार का ज्ञान भण्डारित है और हम उसका सदुपयोग सामाजिक क्षेत्र में नहीं करते हैं। लोगों को उससे लाभान्वित नहीं करते हैं। तो ऐसे ज्ञान का क्या फायदा। हमारा ज्ञान हमारे व्यक्तित्व जीवन में सहायक होना चाहिये। जिसके द्वारा हम अपने व्यक्तित्व और चरित्र को परिष्कृत कर सकते हैं। इससे हमें अपने आचरण में परिवर्तन का सुअवसर प्राप्त होता है। अच्छाई मानव की प्रकृति है। सत्य भी है, शाश्वत भी है। हम सबकी मानवता ही सामाजिकता को स्वस्थ और सुन्दर रूप प्रदान करती है। हम सभी की बीमार मानसिकता समाज को रूग्ण बना देती है। जब तक हमारी मानसिकता में सामाजिकता का अनुपात अधिकाधिक नहीं होगा तब तक हमारे अन्दर आत्मीयता और सरलता नहीं आयेगी। मानवता का मुख्य अंग है आत्मीयता और सरलता। आज के इस अति व्यस्त युग में जहाँ इन्सान को अपने परिवार के भरण–पोषण में फुर्सत नहीं है। वहाँ मानवता–आत्मीयता सरलता और सामाजिकता की भावनाओं को लोगों में कैसे विकसित किया जा सकता है। यह विषय हमारे प्रबुद्ध वर्ग के लिए विचारणीय है। हमें हमारे जीवन का कुछ कीमती समय समाज व देश प्रेम के लिए निकालना होगा। जब हम आगे आयेंगे तो हमारे पीछे आने वालों की कमी नहीं होगी। हमारा ज्ञान भी सार्थक होगा–जब हम हमारे ज्ञान को इस महान यज्ञ में आहुति बनाकर डालेंगे तो हमारे ज्ञान और परिश्रम की ज्वाला समाज की कुरीतियों को नष्ट कर प्रकाश पैदा करेगी अर्थात् लोगों की सोई हुई आत्मा को जागृत करेगी। फिर लोगों में आत्मविश्वास पैदा होगा और आज जरूरत है। आत्मविश्वास और दृढ़ संकल्प की। अपने से मानवता के

नाते जिसका जितना भला हो करना चाहिये। क्योंकि इसी में अपना भी भला है। आज ईर्ष्या, छल, कपट व द्वेष आदि ऐसे दुर्गुण हैं जो हमें अन्दर तक खोखला करते जा रहे हैं। साथ ही जिस तरह चुम्बक में चिपकने का चुम्बकत्व गुण होता है उसी तरह हमारे अन्दर भी ईश्वर का प्रदान किया हुआ चिन्तन नामक गुण होता है।

इस चिन्तन के गुण को ईर्ष्या, छल, कपट व द्वेष ये चारों विकृतियाँ नष्ट कर देती है। विकृत कर देती हैं। हमें इनसे बचना होगा। सद्गुरु कृपा से सद्गुण व सदाचार जैसे पोषक तत्वों को धारण कर हमें सुख–समृद्धि एवं प्रसन्नता का साम्राज्य स्थापित करना होगा और इसी आशा के साथ हमारे ज्ञान को सदुपयोगित करते हुये एक दूसरे से मिलकर अपने मानवीय गुणों को याद रखते हुये सतत् प्रयत्नशील रहना होगा तभी हमारे ज्ञान का महत्व सार्थक सिद्ध होगा।

नैतिकता का मूल्य

इन्सान कुर्सी से नहीं बल्कि शुद्ध नीति से नेता बनता है। नीति की ताकत पर ही इन्सान रूकता है और नैतिकता की शक्ति ही मानव की इन्सानियत का धरातल है। मानवता के रास्ते में कई ऐसे अवसर भी आते हैं कि जब धन काम नहीं आता। अतः धन पर अभिमान नहीं रखना चाहिए। आत्मशान्ति केवल शाश्वत मूल्यों को लेकर जीने में ही मिलती है। सही ढंग में देखा जाये तो वास्तविक सम्पन्नता ही यही है। इस पापी संसार में आकर हम स्वयं के साथ–साथ इस सर्वशक्तिमान जगदीश्वर पिता को भी भूल जाते हैं। अर्थात् भूलने लगते हैं जिसके फलस्वरूप जीवन में समस्यायें आन लगती हैं और हमारा इन्सान पथ–भ्रष्ट होकर विचलित होने लगता है। कठिनाईयों से लड़ने की सार्मथता ही हमारी असमर्थ हो जाती है। हमारे और परमात्मा के मध्य में भौतिकता का भूत आवरण बना हुआ है। यही हमें ईश्वर (प्रभु) से दूर करता है और सिर्फ भौतिकता की ओर आकर्षित करता है। इस अन्तराल का हमें सदैव ख्याल रखना चाहिए। हमें यह कभी नहीं भूलना

चाहिए कि उस पृवर्दीगार की इस रची हुई सृष्टी में मानव ही उसकी सर्वोपरि व सर्वोत्कृष्ट रचना है। अतः मानव से अपेक्षायें भी अधिक होना स्वाभाविक है और यदि हम जीवन के सत्य को जानना चाहते हैं तो हमें सर्वप्रथम अपने आपको पहचानना होगा और मालूम करना होगा कि इस मानव मन्दिर की उपयोगिता क्या है? नीति से, शुद्ध भाव से अपने आपसे प्रश्न करना होगा कि हम कहाँ तक सृष्टि में खरे उतरे हैं। सृष्टि नियम में कहाँ तक रहे हैं, जहाँ कहीं भी नैतिकता, सिद्धान्तों व आदर्शों की बात होगी। इसके साथ ही उसका अनुसरण किया जायेगा, वहाँ प्रभु की कृपा से सुख शान्ति एवं समृद्धि हमें अवश्य मिलेगी। वो परमेश्वर भी मेरे अनुभव से शायद यदि अपेक्षा करता है कि मानव हृदय प्रेम के लिए है। कटुता के लिए नहीं, मानव केवल सांसारिकता और भौतिकता के वशीभूत होकर अपने राग–द्वेष का कारण खुद बना लेता है। यदि वह सबसे ऊपर उठकर केवल नीतित्व के मूल्यों के प्रति समर्पण कर समर्पित होकर जन व्यवहार और लोक व्यवहार करे तो कटुता का कोई कारण ही न बनेगा। अतः हमें उसके ही निकट रहना चाहिए जो शाश्वत है और वह है प्रेम, प्यार और भाईचारा।

हमारे सम्बन्धों की गहराई का आधार केवल प्यार और आत्मीयता है। प्रेम एक ऐसा आवरण है जो आत्मीयता भाईचारा और विश्वास को पोषित करता है। आज की आवश्यकता है हमें नैतिक मूल्यों को जीवन में ढाल कर, आत्मसात करने की। तभी हमारा सामाजिक ढांचा स्वस्थ, सुन्दर और सुरक्षित रह सकेगा। यही नीति एवं नैतिक व्यवहार है एवं अनमोल नीति का मूल्य है।

लिप्सा विनाश का कारण है

धन कमाने के पीछे तर्क होता है कि जीवन चलाने के लिए पैसे की जरूरत होती है। जिस धन की हम कल्पना करें, केवल उतना ही हम अपने जीवन में नहीं कमाते हैं। एक मकान में सुखपूर्वक रहने के बावजूद भी हम दूसरा मकान बनवाते हैं। बेरोजगार लोगों की कामनाएं होती है कि कहीं हमें

बस चार–पाँच हजार रुपये मिल जाये नौकरी से तो बस जीवन चल जायेगा। लेकिन जब नौकरी मिल जाती है तो इतने में काम नहीं चलता। कमाने की चाहत बढ़कर और कई गुणा रूप ले लेती है। फिर उससे भी चाहत नहीं मिटती है तो और ज्यादा कमाने की भूख बढ़ने लगती है। हम क्यों कमाते हैं? क्या केवल अपने ही लिए? अपने लिए कोई कितना कमायेगा। कितना अन्न खायेगा, कितना कपड़ा पहनेगा, एक मकान और एक गाड़ी के साथ–साथ खाने–पीने का सारा सामान इकट्ठा हो जाये, तब भी हम बैंकों की शोभा बढ़ाने और अपनी बैंक एकाउन्ट की राशि को बढ़ाने के लिए जो करते है व लालसा हो जाती है यानि लिप्सा। इसे जितना बढ़ाते हैं यह उतना ही विकराल रूप धारण करती चली जाती है और हम हैं कि और अधिक के पीछे दौड़ते चले जाते हैं। फिर यह और सीमा पार कर जाये तब यही धनराशि हमारे कष्ट का कारण बन जाती है। दौड़ते–दौड़ते हम इतने थक जाते हैं कि हमारे शरीर की सारी ऊर्जा समाप्त हो जाती है। यह इस हमारे भारत देश के ही नहीं बल्कि विश्व के किसी भी धनाडय व्यक्ति से पूछे कि क्या आपको और धन चाहिए? वह कहेगा अभी मैंने किया ही क्या है? मुझे तो और करना है। जैसे सिकन्दर को ही देख लो, उसने मुहल्ला, देश और विश्व जीता। इसके बाद उसके जीवन में दौड़ते–दौड़ते जो हाहाकार और जो दुर्गति हुई कि मृत्यु भी उसकी मौत से घबरा गई। पं० जयशंकर प्रसाद ने भी तो यही कहा कि धन संग्रह, विवेक और स्वास्थ्य का हमें ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। दुनिया में ऐसे बहुत से लोग होते हैं जो यह कहते हैं कि मुझे धन मिल जाये। ऊँची कुर्सी मिल जाये। परन्तु क्या ऐसा बनने के लिए क्या वास्तविक प्रयास किया। यहाँ प्रयास शून्य है। जब प्रयास शून्य है तो परिणाम कैसे मिलेगा? धन संग्रह के लिए आपने क्या किया? कौन सी बुद्धि लगाई या कौन सा विवेकपूर्ण काम किया जिससे कि आपके पास ढेरों सारा धन आ जाये। धन अर्जित करने की लालसा इन्सान को लालची बना देती है। इसलिए मित्रों कभी भी धन की लिप्सा पैदा हो तो किसी सज्जन व्यक्ति की संगत में जाकर अपने चित को चंचल एवं लालची बनने से रोकें। धन हमेशा सिर्फ आवश्यकतानुसार ही अर्जित करना चाहिए।

क्योंकि इतिहास गवाह है कि आज तक जिन–जिन व्यक्तियों ने लालच किया। इस धरा से उनका नामोनिशान मिट गया। लालच से इन्सान ही नहीं बल्कि कोई भी जीव हो आखिर में मायूसी ही प्राप्त करता है तथा विनाशशील ही सिद्ध होता है।

त्याग और आशक्ति

त्याग और आशक्ति ये दो मानव जीवन की नदी के दो तट हैं जो कि संग रहते हैं लेकिन मिलते कभी नहीं। पहला दूसरे से विरक्ति का भाव लिए होता है। जबकि दूसरा पहले से ईर्ष्या का। पहले का मार्ग भक्ति व साधना की सीढ़ियों से स्वर्गारोहण की शिखा पार कर जाता है, दूसरे का मार्ग कामनाओं की कंटीली झाड़ियों–वृक्षों से होता हुआ दुःख–पीड़ा, पश्चाताप व क्षोभ के सघन नरकीय अभ्यारण में जाता है। पहले का लक्ष्य स्वयं दुःख सहकर दूसरों को सुख प्रदान करना, प्रेरणा, आनन्द, उत्साह, संजीदगी, आस्था, श्रद्धा, विश्वास तथा सेवा का प्रसाद देना होता है। जबकि दूसरे का लक्ष्य राग–द्वेष, घृणा, उन्माद, अराजकता (नष्ट होने का सूचक) विध्वंश इत्यादि है। त्याग की सीढ़ियों पर उत्साह व श्रद्धा के पावों से साधना के उत्साह से आराध्य के सनातन दिव्य तीर्थ धाम तक पहुँचना संभव हैं भगवान का परम धाम सांसारिक उतुंग (गगन स्पर्शी) दुर्गम शिखर पर अवस्थित हैं यह आस्था की डोर पकड़ भक्ति की पालकी में बैठ, उत्साह व विश्वास के गुरु के नेतृत्व में जिज्ञासा की उँगली थाम परम धाम को पहुँचा जा सकता है। वह शाश्वत धाम जन्म–मृत्यु, सुख–दुःख, मिलन–विछोह के दुर्लभ भावों से दूर जीवन सत्य के साक्षात् दर्शन का परमानन्द धाम है। जहाँ परिचय भी अपरिचय के महासमुद्र में विलय हो केवल एक ही अर्थ, सुख, प्रतीति व जीवन को एकाकार कर सार्थकता का प्रमाण पत्र अनुभुति के धरातल पर कराता है। फिर वहाँ अभिव्यक्ति मौन हो श्रीमुख से महिमामंडित हो जाती है और लगन (आशक्ति) यह प्रदूषित जल की वह अवरुद्ध धारा है जो उसके स्पर्श मात्र से सारी धरा (जमीन) व जन्म–जन्मान्तरों की इस जीवन नदी

को न केवल कलुषित (दूषित) करती है अपितु अनेक जीव–योनियों के जीवनों को रूग्ण कर नरकीय परिवेश में चलने को बाध्य भी करती है। आशक्ति के दूषित जल में अपने अस्तित्व के मिट जाने से पहले मित्रों आओ त्याग की जीवन धारा से मानव जीवन को पवित्रतम बना लें। आईये, केवल्य को पाये और त्याग अपना कर आशक्ति को परितज्य करते हुये हरि दर्शन से जीवन यात्रा की सही मंजिल तलाश लेवें।

हमारी आशक्ति को मिटाने में गुरुदेव का आशीर्वाद व उनका मार्गदर्शन जरूरी है। गुरु भक्ति हमारे जीवन को प्रफुल्लित कर हमें दुष्कृत्यों से बचाती है और ये त्याग से संभव है।

पवित्र मन

इस सम्पूर्ण सृष्टि व सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में समाहित सभी जीवधारियों से सृष्टिकर्ता की सर्वश्रेष्ठ कृति व परमात्मा के बाद दूसरा श्रेष्ठ अगर कोई है तो वह केवल मानव ही है और मानव देह में सर्वश्रेष्ठ प्रभु प्रदत वरदान मानव–मन है। इस मन को परिभाषित करने के लिए अनेकोंनेक धर्म गुरुओं, संतों, ज्ञानियों तथा कवियों ने अपने–अपने विचार तथा अनुभव समाज को दिये और भिन्न–भिन्न ढंग से व्याख्यान किये। अतः मैं (लेखक) अपने पूज्य सद्गुरु देव (महन्त डॉ. चेताईनाथ जी) के प्रवचनानुसार व मार्ग दर्शनानुसार बताना चाहूँगा कि मन इस मन–भाषित शब्द का सामान्य अर्थ है कि प्राणियों की वह शक्ति जिसके द्वारा विचार, संकल्प, अपना–पराया, सुख–दुःख आदि की अनुभूति होती है और मन का स्वभाव स्वच्छन्द और चंचल प्रवृति का होता है तथा दर्शन शास्त्र के ज्ञाताओं के अनुसार मन उस जलाशय के समान है जिसका जल हवा के प्रभाव से ही लहरों में परिवृतित होकर गतिमान हो जाता है। 'मन' स्वच्छन्द और चंचल होने के साथ ही वह मनोनुकूल कार्यों में ही रूचि लेता है। इसी के साथ दूसरी ओर मनोवैज्ञानिकों ने मन में उठने वाली हिलोरों को कल्पना कहकर उसे विचारों का मूल केन्द्र माना है। मन में उठने वाले विचार ही मनुष्य को उत्थान व पतन की ओर अग्रसर करते हैं।

वस्तुतः मन इन्द्रियों का मात्र समूह है। इसलिए यदि मन पर नियन्त्रण हो जाये तो इन्द्रियां भी अपने प्राकृतिक स्वभाव को मनुष्य के अधीन कर देती हैं और नियन्त्रित हो जाती हैं। मन की सहजता–सरलता स्निग्धता (प्रिय होने का भाव) चित्त की एकाग्रता आदि प्रभु प्राप्ति के लिए अति आवश्यक है। इसके लिए संत सानिध्य–गुरु प्रेरणा जो कि हमारे विवेक के अति उत्तम माध्यम होते हैं। ये सब अति आवश्यक हैं। इन माध्यमों के बिना हमारा मन भटकता रहता है। इन सहिष्णु माध्यमों के जरिये हमारा मन (चित्त) एकाग्र हो चिन्तन कर हमारे मानव जीवन को साकार सिद्ध कर सकता है और इस माध्यमों की अनुपस्थिति और विपरीतता हमें सिवाय पतन के कुछ भी नहीं दे सकती। हमें अर्थात् मानव को इन माध्यमों का साथ व सानिध्य तभी मिल सकता है कि जब हमारे ऊपर ईशकृपा हो अन्यथा नहीं।

इन परोपकारी माध्यमों का सानिध्य हमें प्रमुखतः सत्संग के रूप में भी मिलता है। सत्संग शब्द का प्रयोग व्यापक अर्थ में भगवान का गुणगान, श्रवण, अर्पण, स्मरण, वंदन और अर्चन का ही रूप है। पवित्र मन सामान्यतः पंचविकार से रहित होता है। जैसे–काम, क्रोध, मध, मान और मोह इति पंच विकार हैं।

क्योंकि इन उपरोक्त विकारों में सदैव अहमन्यता विराजमान होती है जो कि मानव मन में क्षोभ–क्रोध और अहम् यानि मैं की भावना को जन्म देती है।

ये सर्वथा त्याज्य है। यही मन की पवित्र और स्वच्छ, सुन्दर रूप में ढालने हेतु पाँच सद्गुणों की जैसे सत्य, अहिंसा, अस्तेय (चोरी का त्याग) ब्रह्मचर्य तथा संग्रह का त्याग आदि अति आवश्यक होते हैं। साथ ही लिखते समय महान संत तुलसीदास जी की मन के विषय पर दी हुई टिप्पणी भी मुझे (योगी शुक्राईनाथ) स्मरण हुई तो बताना चाहूँगा कि संत तुलसी दास जी ने भी बताया है कि इन पांच सद्गुणों के समावेश से मानव के मन की अहंता–ममता समाप्त होकर मन निर्मल होने लगेगा और साथ ही बताना चाहूँगा कि हमारे परम पूज्य गुरुदेव भी हमें समय–समय पर यही उपदेश

देते हैं कि इन्सान को स्वाध्याय–सत्संगति तथा अपना स्वयं एकाग्र होकर आत्मनिरीक्षण प्रसन्नचित्त और चिन्तन के साथ करना चाहिए जिससे हम अपने आपको समझ सके और अपने मन को अपवित्रता से हटाकर पवित्रता की तरफ अग्रसित कर सके।

इस विषय पर सत्गुरु शम्भुजति योगाचार्य श्री गोरक्षनाथ जी ने भी अपनी वाणी में कहा है कि–

गोरक्षवाणी–

मन मूरख समझे नहिं, योग मार्ग की बात।
मन अति चंचल भटकत फिरै, करे बहुत उत्पात॥

योग की वास्तविक व्याख्या–

आज समाज में दन्त कथा फैली हुई है। योग के बारे में तथाकथित रूप से आज समाज भ्रमित हो रहा है क्योंकि समाज को सही दिशा–निर्देश की बजाय सिर्फ काफी दन्त कथाओं पर ही आधारित रखा–कुछ समाज के दुश्मनों ने अब हम वास्तविकता की सीढी को स्पर्श करने जा रहे हैं। इस वास्तविक एवं प्रमाणित बिन्दुओं को आप अपने विवेक से अध्ययन करे जाने।

आइये जानते हैं योग की वास्तविक परिभाषा–

योग का अर्थ है–मिलना/एक समान गति को प्राप्त करना

अर्थात् बताना चाहता हूँ कि जीवात्मा और परमात्मा दोनों का मेल ही योग है। अर्थात् जीवात्मा तथा परमात्मा दोनों का एक साथ आपस में एकाकार होना ही योग है।

अब प्रश्न–**परमात्मा व जीवात्मा क्या है?**

मानो आकाश का चाँद परमात्मा है तथा समुद्र में या तालाब में उसकी प्रतिछाया जीवात्मा है। अब जीवात्मा को परमात्मा के साथ कैसे एकीभूत (मिश्रित) किया जाये। जब आकाश का चाँद समुद्र या तालाब के निकट पहुँचता है तब दोनों का मिलाप (एकीकरण) होता है। उसी तरह जीव

के मन पर परमात्मा की प्रतिछाया ही जीवात्मा है। मन जब परमात्मा के पास पहुँचता है तब जीवात्मा और परमात्मा का एकीकरण होता है तथा तत्पश्चात् दोनों एक हो जाते हैं। जब हम वास्तविक या सद्गुरु प्रेरणा से शास्त्रोक्ति में लीन हो जाते हैं तब हमें यही वास्तविक योग की सही परिभाषा प्राप्त होती है।

बिना योग के भक्तिमार्ग उसी तरह बंजर है जिस तरह भूमि बिना बीज और जल के और भक्ति उसी तरह खण्डर है जिस तरह बिना मालिक के मकान (बिना सावधानी के मकान) हमें ज्ञान और कर्म की भी साधना करनी पड़ेगी। सिर्फ आसन और प्राणायाम से ही परम धाम की पवित्र शाश्वत सत्ता को नहीं पाया जा सकता। जब मानव योग की गहराई तक परमतत्व को महसूस कर खोज करता हुआ आगे बढ़ता है तो वह अनुभवशील होकर प्रभु के इस गहरे राज को भी जानने से अनभिज्ञ नहीं रहता, जैसे मानव खोज से पहले अनभिज्ञ होता है।

अर्थात् वह पाता है कि सबसे महत्वपूर्ण एवं अति आवश्यक अगर कुछ है तो वह सिर्फ भक्ति मार्ग ही हैं

प्रभु ज्ञान क्या है?

सभी वस्तुओं में परमात्मा की सत्ता को अनुभूति हेतु मनुष्य साधना करते हैं जबकि यह वास्तविकता है कि परमात्मा सभी वस्तुओं में नहीं है। बल्कि सभी वस्तुयें परमात्मा में समाहित हैं। यानि सम्पूर्ण जगत व सृष्टि परमात्मा में समाई हुई हैं। सब कुछ परमात्मा के वशीभूत हैं ना की परमात्मा सबके। ज्ञान की साधना तभी संभव है जब यह ज्ञान (बोध) होता है कि सम्पूर्ण अखण्ड मण्डलाकार ये ब्रह्माण्ड का पूर्ण दृष्य अपने गुणों दुर्गुणों सहित उस निराकार परमात्मा से ही सम्बन्धित है। इस अनुभूति को ही प्रभुज्ञान कहते हैं।

कर्म साधना क्या है?

इस भौतिक विश्व में सभी व्यक्तियों में कार्य करने की संभावना है किन्तु यदा–कदा (कभी–कभार) ही कोई इन्सान 100% संभावना का सदुपयोग कर पाता है तथा किसी व्यक्ति की 90% संभावनाओं का उपयोग नहीं हो पाता।

सिर्फ 10% का उपयोग करके ही व्यक्ति इतना काफी पूजित हो जाता है कि सोच भी ना सके। किन्तु यदि उसकी सारी 100% सम्भावनाओं का उपयोग हो जाये तो यह कल्पना भी नहीं की जा सकती कि कोई कितना महान व तेजस्वी बन सकता है। यही कर्म की सही साधना है। जो दूसरों के लिए करता है। वह वास्तव में महान है। और जो सिर्फ दूसरों के लिए ही कर्म करते है और अपने लिए कुछ नही वे 'कर्मसिद्ध' कहे जाते है। इसलिए ज्ञान और कर्म के द्वारा भक्ति की जागृति की जाती है।

भक्ति की जागृति के लिए ज्ञान और कर्म दोनों की अति आवश्यकता होती है।

साधक जो साधना करता है। उसका हृदय (मन) भूमि की तरह होता है। और उसका ईष्ट गुरु मंत्र बीज होता है और भूमि का जल उसे मिलता है।कर्म सिद्धी से। फिर यदि हम साधक बनकर हमारे हृदय रूपी भूमि में गुरू मंत्र रूपी बीज बोकर भक्ति रूपी जल से सिंचाई करें तो फल क्या होगा। हम खुद भी अनुमान नहीं लगा सकते। परमेश्वर अथाह देता है। लेकिन यदि हम जहाँ भक्ति रूपी फल की ठण्डी फुँहार तथा भूमि रूपी हृदय की सम्पनता ना हो वहाँ पर गुरू मन्त्र रूपी ईष्ट बीज उस मरू भूमि में बोयें या कोई बौना चाहे तो व्यर्थ ही सिद्ध होगा ।

यही वास्तविक जीवन का योग है एवं यही योग साधना की कर्म सिद्धी साधना सहित परिभाषा है।

कर्मों की श्रेष्टता

जिस प्रकार हमारे पवित्र भारत वर्ष के योगी, सन्त कवि व अनेकों विद्वान इस पवित्र भूमि पर आश्रित हुये। उन सबने क्रमशः अपने योग सन्तत्व ज्ञान व अनुभवों द्वारा हमे समय–समय पर जागरूक व कृतार्थ किया है। उन्हीं की आदर्शवान स्थिति को हम समझने तथा उनके बताये मार्ग पर चलने का हमें प्रयत्न करना चाहिए। जो कि हमारे चरित्र से लेकर हर मोड़ पर हमारा साथ देती है तथा उन्हीं का पथ हमारे कर्मों को प्रकाशमय

एवं श्रेष्ठ बनाने में मददगार सदा रहा है। रह रहा है और सदा चिर काल तक रहेगा। अतः हमें हमारे जीवन में सुशिक्षा से हमारे कर्मों को उचित दिशा निर्देश में रखते हुये। गतिशील होना चाहिए।

जीवन में सभ्य कर्म उस निवेश की तरह होते हैं जो कि भविष्य में आड़े समय में हमारे सहायक होते हैं। इसलिए प्रायः सुना जाता है कि विपता के समय शुभ कर्मों ने ही किसी की रक्षा की। तभी हमारे सन्तों और ज्ञानियों को बताने की जरूरत पड़ी कि शुभ एवं सभ्य कर्मों से कभी पीछे नहीं हटना चाहिए। क्योंकि इनका फल हमेशा फलदायक और सम्पूर्ण सुखदायक होता है और इन्हें धन के साथ तुलना करते हुये कहा है कि ये कर्मफल निवेशित धन की तरह होते हैं। जिनका प्रतिफल कभी भी भविष्य में संकट व जरूरत पड़ने पर प्राप्त हो सकता है।

वैसे भी जीवन में हर चीज, हर उपलब्धि की एक कीमत होती है जिनका मूल्य चुकाना होता है जो आप चाहे जीवन के किसी और पहलू में कटौती करके चुकता करे या फिर निवेशित अच्छे कर्म फलों द्वारा बिना कुछ खोये। ताकि आपको जीवन के किसी दूसरे आयाम में पीछे ना हटना पड़े। इसलिए अगर आप चाहते हैं कि जीवन में बिना कुछ खोये सतत् उन्नति करते जाऐं तो यह आवश्यक हो जाता है कि कुछ न कुछ अच्छे कर्म, परमार्थ अवश्य करते रहे। जिस तरह से संचित धन से एक समय पर हमें सबल मिलता है उसी तरह से यह कहना कदापि अनुचित नहीं होगा कि अच्छे कर्म करने तथा आदर्शवान बनने से हमें आत्मबल मिलता है। जो स्वतः ही उन्नति के मार्ग पर ले जाता है। हम सब एक ही ईश्वर की कृति हैं और जीवन में सबको उनका ही हमें आशीर्वाद कर्मानुसार मिलता है। जो स्वतः ही उन्नति की ओर अग्रसर करता है तथा अन्धकार की तरफ भी फिर भी कुछ व्यक्ति पूर्व के निवेशित सुकर्मों द्वारा चहुंमुखी उन्नति करते हैं। क्योंकि उन पर कृति कर्ता की कृपा हमेशा जीवन के हर आयाम में बनी रहती है। यदि हम अपनी उन्नति चाहते हैं और जीवन को खुशहाल बनाना चाहते हैं तो निःसंकोच हमें हमारे नित्य कर्मों को ज्यादा से ज्यादा दूसरों की भलाई एवं सृष्टिहित में लगाने होंगे। इति जीवन मूल मन्त्रम्।

यही जीवन का मूल मन्त्र है। यही मानवता है। यही धर्म है। यही सहिष्णु कर्म हैं। इसी में हमें जीवन के सुकर्मों का फल प्राप्त होगा जो हमें आत्मिक सुख, सन्तोष और शान्तित्व प्रदान करेगा। दूसरे पवित्र शब्दों में कहा जा सकता है कि यही जीवन धन्य एवं महान सफलता का प्रतिभागी है। जिसके कर्म स्वयं के कम और दूसरों की भलाई हेतु अग्र होकर श्रेष्ठता का पद ग्रहण करने में सक्षम हुआ हों

इति धन्य जीवनम् इति श्रेष्ठ कर्मों: महता:

–महन्त योगी सुन्द्राईनाथ जी (अलेवा)

रास्ता पतन का है जलन

इन्सान के जीवन का एक ऐसा कारण जिसमें मानव गति विरुद्ध होकर पहुँचता है पतन की ओर।

वह कारण है ईर्ष्या की भावना। यह ऐसी कटाक्ष कर देने वाली दबी कुचली एक अमानवीय दिशा की विकृति है जो मानव को सिर्फ फल रूप में पीड़ित ही करती है और मन पथभ्रष्ट बना देती हैं यह एक ऐसे दर्द का दल–दल है जो अपने में कितनों को डुबोऐ रहता है अनुमान नहीं। ये मनुष्य को एक ऐसी अंधेरी सुरंग में धकेल देती है जिससे फिर बाहर निकलने का कोई और–छोर नहीं होता। जलन का भाव हमारी जिन्दगी में भयावह तूफान खड़ा कर देता है। लेकिन यहाँ प्रश्न ये बनता है कि ये भाव अर्थात् ईर्ष्या (जलन) का भाव क्यों पैदा होता है। इसके पीछे की चित्तवृति क्या है?

इसका जबाब है कि तकरीबन मानव उसी से ही ज्वलनशील रहता है जिससे कि वह उसके जैसा बनना चाहता हो और उस जैसा ना बन पाने की अतृप्ति में वह ईर्ष्यान्वित यानि ईर्ष्यालु हो जाता है जिसका उसके पास अभाव है।

जलन की भाव दशा में निंदा का अंतहीन सिलसिला प्रारम्भ होता है जिस शख्स से हम ईर्ष्या करते हैं उसकी हम प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से निन्दा करने से भी कभी नहीं चुकते। हम अर्थात् ईर्ष्या करने वाला यह भी

चाहता है कि अन्य लोग भी उसकी घोर उपेक्षा करें, उसे प्रताड़ित करें और जब कभी ऐसा होता है तब हमें (कर्ता को) अत्यन्त खुशी का ऐसा आनंद प्राप्त होता है कि वो फूला नहीं समाता है। जबकि शास्त्र कहते हैं कि हमें पर–पीड़ा (दूसरे का दुख) से खुशी नहीं बल्कि अपने दुख से भी ज्यादा दुखी होना चाहिए परन्तु ईर्ष्या की भाव भूमि में हम शास्त्रों को अनदेखा कर अपनी मदहोशी में खुशी का सवादन करते हैं जिसे कभी भी शास्त्रोक्ति की देवस्थिति में सकारात्मक प्रवृति नहीं कहा जा सकता।

ये भद्र एवं अशोभनीय स्वभाव उन्हीं व्यक्तियों में पैदा होता है जो आत्महीनता के शिकार होते हैं। यह प्रवृति हमारी मानवीय गुणों से सम्पन्न आध्यात्मिक शक्तियों का हरण कर उन्हें अमानवीय शोभा में शोभायमान करती है। ऐसी स्थिति में व्यक्ति के व्यक्तित्व के आन्तरिक विकास के सारे रास्ते बन्द हो जाते हैं और हम (कर्मकर्ता) विनाश की उस सुरंग में असफलता का दरवाजा खट–खटाते हुये भ्रमित स्थिति में रहते हैं। इस चुड़ैल प्रवृति से छुटकारा पाने हेतु मानव को अपनी मौलिकता (मूल गुणों को) विकसित करने का उपाय अच्छे सुगम मार्गदर्शन से खोजकर मौलिकता को सुविकसित करना चाहिए। हम दूसरों का अन्धानुकरण ना करें। मन में यह भाव लायें कि मैं अतुलनीय हूँ। इससे हम किसी अन्य व्यक्ति से अपनी तुलना नहीं करेंगे क्योंकि सृष्टिपति (परमात्मा) ने रचना ऐसी अभिग्य रची है जिसमें वो पृवर्दीगार स्वयं निराकार रहते हुये सब किसी को आकार में और भिन्न–भिन्न गुण सम्पन्न बनाया है। सभी की अपनी अलग–अलग वृतियां हैं। इसलिए स्वयं की दूसरे से तुलना ना करें, बस अच्छे एवं नेक कर्म करें और हाँ हम दूसरों के अच्छे गुणों को अपने अन्दर समाहित करने के कार्य में पहल तो कर सकते हैं। लेकिन हमें अपनी उपलब्धियों पर प्रसन्न होना चाहिए और किसी अन्य के विकास और प्रयास में हमें बाधक नहीं बनना चाहिए। हमें दूसरों का हौसला अफजाई करना चाहिए और ईर्ष्या के इस दुष्ट रोग से बचने हेतु हमें हमारा ध्यान, चित, वृति और कर्म इनका विशेष ख्याल रखना चाहिए। यही हमें उत्थान की और अग्रसर करते है और ये ही पतन की ओर।

तपस्या का महत्व

तप आध्यात्मिक जीवन की आधारशिला है। तपस्वियों के जीवन की सामान्य घटना भी आम आदमियों के लिए आश्चर्य व कोतूहल का विषय बन जाती है। जैसे संत श्री तुलसीदास जी ने भी 'तप आधार सब सृष्टि भवानि' लिखकर इसे महिमा मण्डित किया है। तपस्वी अपने जीवन की दशा खुद निर्धारित करते हैं। जबकि सामान्य व्यक्तियों का जीवन पूर्णतया परिस्थितियों के अधीन होता है। तपस्वी तप की उर्जा से परिस्थति की प्रतिकूलता को भी अपने अनुकूलित कर लेते है। वस्तुतः तप करना या तपश्चर्या एक वैज्ञानिक प्रक्रिया जैसी है। जिसकी कुछ मर्यादायें हैं। कोई व्यक्ति सनक में आकर कुछ भी करे इसका नाम तप नहीं है। जैसे प्याज न खाना, नमक ना खाना, नंगे बदन एवं नंगे पांव चलना, भूखे रहना इत्यादि तप करने से शारीरिक कष्ट तो आते हैं। मगर ये कोई तपस्वी के पूर्ण लक्षण नहीं हैं क्योंकि इन क्रियाकलापों से कोई आध्यात्मिक लाभ नहीं मिलता।

तप हमेशा सुनिश्चित संकल्प के साथ और गुरु निर्देशन में ही अति आवश्यक है। गुरु कृपा से जब हम तप करते हैं तो उससे हमारे सुप्त संस्कारों का जागरण (जागृति) होता है और यह जागृति हमें हमारे आध्यात्मिक विकास को गति प्रदान करने में मददगार होती है। तप का उद्देश्य मात्र ऊर्जा का अर्जन करना ही नहीं बल्कि संग्रहित ऊर्जा का संरक्षण एवं सुनियोजन सदुपयोग भी है जो अपनी ऊर्जा को संरक्षित एवं शुद्धिपूर्वक कर लेता है वह सामर्थ्यवान हो जाता है। तपश्चर्या को चमत्कार ना लेकर रचना का परिष्कार है जहाँ परिष्कार है, त्याग है, भक्ति है, जहाँ पर चमत्कार स्वयं होने लगते हैं। क्योंकि गुरु कृपा एवं तप से हमारा चित वस्तुतः ऊर्जावान होता है। अहंकार तप के मार्ग में सबसे बड़ी बाधा है।

जब हम पौराणिक कथाओं में एवं चिरकालीन अतीत में खोते हैं तो हमें यही प्रमाण मिलते हैं कि तप के मार्ग में और तपस्या करने में असुर शक्ति एवं असुर सबसे आगे चले हैं। तपस्या के द्वारा वे भगवान से मन इच्छित वरदान प्राप्त करते थे। आलस्य को त्याग कर वर्षों तक अखंड तप

करने का साहस भी रखते थे (उनमें होता था) किन्तु अपने अहंकार का कभी त्याग नहीं कर पाने की शक्ति एवं साहस उनमें नहीं था इस कारण से वे प्राप्त तप की ऊर्जा (शक्ति) का घमण्ड से दुरुपयोग करते थे तो अहंकार ने राक्षसों को क्या दिया? केवल पतन। इस शिक्षा से हमें अभिमान त्यागकर हमेशा तप का तथा ईश्वरीय शक्तियों का सदुपयोग चित शुद्धि एवं सृष्टि हित के लिए करना चाहिए। चित्त जितना शुद्ध होगा उसी आधार पर हमारा मन स्थित होगा, मन के स्थिर होने पर हमारे संस्कार शुद्ध होते हैं। तपस्या किये बगैर किसी को भी कोई सिद्धि प्राप्त नहीं होती। इसका प्रमाण हमारा प्राचीन इतिहास है जैसे जैन धर्म के तीर्थंकर महावीर स्वामी तथा बौद्ध धर्म के प्रवर्तक गौतम बुद्ध को सद्ज्ञान की प्रान्ति बारह वर्ष की कठोर तपस्या के बाद ही हुई तथा बाल्मीकि रामायण के रचियता एवं महान शाक्तिशाली काव्य छन्दों के रचनाकार महर्षि बाल्मीकि भी बार साल की घोर तपस्या से ही असुर तत्व से छुटकारा पाकर महर्षि का दर्जा प्राप्त कर संसार में युगों–युगों की अमरता हासिल कर विख्यात एवं मोक्ष गति को सम्मिलित हुये एवं बालक ध्रुव ऋषि को भी कठोर तपस्या का श्रेय ऋषि–मुनियों ने, सिद्धों ने, तपस्या के महत्व को समझा एवं फलानुसार अमरता को प्राप्त हुये। तदोपरान्त तप ने इन्हें महान एवं महत्वपूर्ण बनाया।

पुरुषार्थ का महत्व सामर्थ्य की महत्ता

धर्म प्रेमी बन्धुओं! हमारे धर्मगुरुओं ने एक स्वस्थ, चरित्रवान सुसंस्कारित एवं शिष्टाचार से पूर्ण समाज को निर्माण के लिए चार महत्वपूर्ण पुरुषार्थों की उपयोगी विधि हमें प्रदान की है। चार पुरुषार्थ जैसे–धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष आदि। वेदानुकूल जीवन पद्धति अपनाने से जीवन और जगत सर्वथा मंगलमय बन जाते हैं। इन चार पुरुषार्थों के द्वारा इहलोक और परलोक दोनों को सुखमय एवं मंगलकारक बनाया जा सकता है। पहली सीढी धर्म है, फिर अर्थ व काम और अन्त में मोक्ष की प्राप्ति हैं धर्म शब्द का सीधा एवं सरल अर्थ है जो धारण किया जाये। धर्म जीने की कला है। धर्म

का सम्बन्ध आत्मा से है। धर्म जीव को संयमी और मानवीयता की ओर प्रेरित करता है जिससे हमारा अभ्युदय होता है। हमारी वृद्धि होती है। उन्नति होती है और हम संसार बन्धन से मुक्त हो जाते हैं। इसे धर्म कहते हैं। हृदय की पवित्रता ही धर्म का वास्तविक स्वरूप है। जीवन में धर्म का सार–संयम होता है। हमारे विद्वान कहते हैं कि जिससे मनोरथ की सिद्धि हो, वृद्धि हो, उन्नति हो तथा हम संसार चक्र से मुक्त हो जाये वही धर्म है। इसके बाद दूसरा स्थान अर्थ का है जिससे कि हम सबकी विस्तारित वृद्धि हो–जैसे जीवन की प्रगति का मूल आधार ही धन है। उद्योग धन्धे, व्यापार, कृषि आदि सभी कार्यों के निमित धन की आवश्यकता होती है। धर्म ही अर्थ की गति को सुव्यवस्थित रखने की समझ तथा बुद्धि प्रदान करता है और सुझाता है कि अर्थोपार्जन करते हुये प्रकृति से, समाज से हमने जितना लिया है उससे अधिक उसे लौटाने का प्रयास करते रहें। अब तीसरा स्थान दिया है काम को–इसे हमारी भारतीय प्राचीन संस्कृति से ही बंधित कर रखा गया है। धर्मपूर्वक संयम और सीमित मर्यादा में ही इसे सम्मान दिया है। काम के भोगपक्ष को मर्यादा, प्राकृतिक एवं सामाजिक नियमों व बन्धनों में ही भोगने की व्यवस्था दी गई है।

श्रीमद् भागवत गीता का अध्ययन करने पर साफ ज्ञात होता है कि पवित्र शिक्षा का अनाशक्ति योग व कर्मयोग भी यही निर्दिष्ट करता है।

पूर्ण प्रमाण हेतु पवित्र गीता ग्रन्थ का गहराई से पाठन करें–योग की सामान्य जानकारी हेतु पढ़ें अध्याय 2, 3 तथा अध्याय 6 तथा 7 को गहरी नजर से।

गीता जी के पवित्र अनुवादन से भी हमें यही गुरु ज्ञान मिलता है कि संसार में जो कुछ भी है सब कुछ समाज के लिए है और उसका प्रयोग धर्मानुसार, विवेकपूर्ण चिन्तन के आधार पर ही श्रेष्ठ एवं उचित है।

इस प्रकार चारों पुरुषार्थ ही मोक्ष प्राप्ति के साधन हैं। भारतीय ऋषि चिन्तन में मानव जन्म का अन्तिम लक्ष्य मोक्ष प्राप्ति ही माना गया है। जब तक जीवात्मा मोक्ष की स्थिति में नहीं है तब तक आवागमन और दुखों से छुटकारा मुश्किल ही नहीं अपितु नामुमकिन है। धर्मानुसार आशक्ति से दूर

होकर ही हमें परम शान्ति एवं मोक्ष प्राप्ति हो सकती है। यही श्री कृष्ण जी का गीता ज्ञान है। यही पुरुषार्थ का वास्तविक महत्व है।

ईश्वर की सामर्थता शक्ति

जो निराकार स्वरूप है नित्य अजन्मा, पवित्र सर्वशक्तिमान, पापनाशक, सयंमी एवं अनादि इन इत्यादि नामों से अनन्त नामों से भी अति अग्रणिय शब्दों को पूर्णाकार में मिलाकर हम जिसे बखान नहीं कर सकते उस महान शक्ति का नाम ही ॐकार या ईश्वर है। जो हर कण–कण में होकर भी अदृश्य मान है। वो दिव्य शक्ति की अपार गुणों से सम्पन्न एवं समर्थ है जिसे हम सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड की स्थिति का रक्षक एवं भक्षक समझते हैं यह ईश्वर/परमात्मा अद्‌भुत है। वो शक्ति जिसको बचाना चाहे उसे कोई मार नहीं सकता। और जिसे वह मारना चाहे उसे कोई दूसरा बचा नहीं सकता। यह अटल सत्य है उदाहरण स्वरूप जैसे रावण, कंश व हिरण्यकश्यप ये तीन सृष्टि के अखंड इतिहास के बड़े पैमाने पर जाने जाने वाले बड़े सूचक है तथा इन जैसे अनेकों बलशाली नृप जिनका कोई बाल भी बांका नहीं कर सकता था उनको भी और उनके गरूर को भी परमात्मा ने मिट्‌टी में मिला दिया। इन शक्तिशालियों का धन–वैभव, ऐश्वर्य सामर्थ्य पराक्रम व जौहर धरा का धरा रह गया। प्रभु ने जिसे बचाना चाहा उसे प्रचण्ड ज्वाला की लपटों से भी बचाकर दिखाया है। अवतरित होकर मर्यादा के चीर हरण में आदर्श, सत्य व ईमान का डंका बजाकर स्पष्ट कर दिया।

जीव सुख, आनन्द व जीवन की चाह में संसार के क्षणिक व दुखमय संसार में सुखानुभूति मरूस्थल में जल राशि की कल्पना जैसी है। वर्तमान के कर्मों की नदी अतीत के पुल से पार होकर भविष्य के भयावह समुद्र में जाकर मिलती है। कर्म का लेखा–जोखा प्रभु! पल–पल चुकता करता हैं लेकिन मित्रों यदि जीवन को मरना ही है तो सारी सम्पत्ति नष्ट कर, सबको कष्ट देकर, अस्पताल की दर–बदर ठोकर खाकर प्रभार चुकता कर क्यों मरना होता है?

आपके जीवन में बड़े–बड़े इस इश्तिहार लगाकर सबको जीवन दान देने का ऐलान करने वाला डॉक्टर भी एक दिन स्वयं रोगग्रस्त हो अपने ही हस्पताल की सेज पर असहाय व असमर्थ होकर पड़ा रहता है।

मरने वालों को चिकित्सक भी नहीं बचा सकते। जिस रोग का, जिस चिकित्सक का, जिस दुकानदार का, चाय वाले का जितना–जितना कर्ज चुकाना है उसे तो पल–पल चुकाना ही है। मृत्यु तो अंतिम सत्य है। आनी ही है। लेकिन उपरोक्त उदाहरण के तहत अपना सबका सारा हिसाब चुकता होने के बाद ही वह आती है। डॉक्टर तो क्या, बल्कि कोई भी उस ईश्वर की प्रदत्त जीवनी से अधिक जीवन देने की सामर्थ्य नहीं जुटा पाता। किंचित और कदाचित भी नहीं। यदि किसी अन्य में यह सामर्थ्य होती तो इस संसार में कोई मरता ही नहीं। यह असमर्थ जीवों का भौतिक संसार है। जो कि पूर्णतया समर्थ, सक्षम व सर्वशक्तिमान ईश्वर के निर्देश व अनुकम्पा पर ही संचालित होता है। इस सम्पूर्ण जगत के साथ सम्पूर्ण 21 लोकों के इस विशाल ब्रह्माण्ड का संचालन केवल मात्र वह निराकार पूर्ण परमात्मा ही अदृश्य रहकर जर्रे–जर्रे में समाहित होकर करता है। इसीलिए ईश्वर को सर्वशक्तिमान कहा गया है। यही ईश्वर की महता है कि उसने कैसी गुणपूर्ण सृष्टि रचाई और स्वयं निराकार, निर्लेप और निश्चल है और सबको संभालता है। सृष्टि पिता है। अनंत नामी भी है तथा अथाह है। कोई भेद, किसी को नहीं है।

भक्ति और शक्ति

किसी भी आराध्य या ईष्ट की उपासना को भक्ति कहा जाता है। आखिर हम भक्ति क्यों करते हैं?
इसका प्रयोजन क्या है?

भक्ति के लिए उपासना पद्धति को क्यों महत्व दिया गया है? ये कुछ ऐसे सवाल हैं जो हमारे मन में पैदा होते हैं।

उपासना की पद्धति का आध्यात्मिक व वैज्ञानिक महत्व भक्ति में शक्ति सन्निहित है। शक्ति के बिना मनुष्य असहाय और असमर्थ है। यही स्थाई कारण है कि वह विभिन्न प्रकार से शक्तियाँ प्राप्त करने में जुटा रहता हे और प्रयास भी करता है। जैसे खान–पान से वह शारीरिक बल की शक्ति प्राप्त करता है। निद्रा से वह शक्ति के क्षीण होने की प्रक्रिया की पूर्ति करता है। मानसिक सन्तुलन की शक्ति प्राप्त करता है। इसलिए मनुष्य के पास शारीरिक शक्तियों को प्राप्त करने के बहुत अनेकों पर्याय हैं। लेकिन बलिष्ट शरीर की शक्तियों से कहीं ज्यादा जरूरी एवं महत्वपूर्ण आध्यात्मिक शक्ति है। उसे ही सबसे सबल माना जाता है। मनुष्य अनेक तरह की असुरक्षा और भय से ग्रस्त रहता है। इन सब नकारात्मक भावों से आध्यात्मिक शक्ति के जरिये ही छुटकारा पाया जा सकता है। इसलिए मनुष्य आध्यात्मिक शक्ति के किसी प्रतीक की तलाश में रहता है और वस्तुतः यही प्रतीक उसे भय से छुटकारा दिला सकता है। इसी आधार पर आकार का निर्धारण किया गया और ये आकार कालान्तर में देवी–देवताओं के रूप में परिवर्तित हो गये और नाना प्रकार की उपाधि प्राप्त कर गये। जैसे बीरबंक हनुमान जी महाराज जिनको बजरंग बली के नाम से भी सभी जानते हैं। ये बलिष्ट है। इसलिए भय मुक्ति वाले प्रधान देव माने जाते हैं। इस उपरान्त हनुमान जी की भक्ति की पद्धति बनाई गई। इस प्रकार आधार मानकर हम उनकी भक्ति कर उनकी भक्ति के बल पर भय या कष्ट का सामना करते हैं।

आत्मिक शक्ति की अनुपस्थिति में हम कभी भी सफल नहीं हो सकते। ऐसा इसलिए क्योंकि जीवन के संकटों और विपताओं का सामना करने के लिए हमें साहस रूपी शक्ति का सहारा चाहिए। जो हमें गुरु प्रेरणा के साथ आध्यात्मिकता की ऊर्जा से ही मिलती है। अब गौर करें कि देवी–देवताओं की पूजा–अर्चना और उनकी भक्ति करने मात्र से भी कुछ नहीं है। इसके साथ यह भी जाने कि इस पूजन अर्चन आदि के पीछे वास्तवकि रहस्य क्या छिपा है। यही महत्वपूर्ण है। रहस्य यही निहित है कि भक्ति की शक्ति ही केवल आपका आत्मविश्वास बढ़ाती है और सच ही नहीं अपितु पूर्ण सच तो यह है कि भक्ति और उपासना पद्धतियाँ अपने विशुद्ध

एवं सहज रूप से मानवीय मनोविज्ञान पर आधारित है।

हमारी धरा पर शास्त्रों के जन्म से पूर्व में भी भक्ति मार्ग पर लोग अपना जीवन व्यतीत करते थे और यह भक्ति मार्ग हमें अनुभव प्रदान कर निष्ठावान एवं कर्तव्य परायण करता है। परमात्मा में विलीन होने का यही एकमात्र मार्ग है।

पवित्र गीता एवं आज तक के सभी सद्ग्रन्थ हमें यही प्रेरणा देते हैं कि भक्ति की शक्ति हमें हर मोड़ पर साथ देती है लेकिन भौतिक शक्तियाँ निमित मात्र हैं।

प्रायश्चित/ पश्चाताप

काफी हद तक इन्सान को कितने भी प्रवचन एवं ज्ञान की गंगा में स्नान करा दिया जाये कितने भी प्यार से और कितने ही डांट–फटकार से समझा दिया जाये लेकिन इन्सान को जो ज्ञान ठोकर खाने के बाद मिलता है वह ज्ञान उसके जीवन में एक अलग की नजरिया तथा अलग ही स्थान रखता है। इस उपरान्त मैं बताना चाहूँगा कि हम इस व्रतान्त को अपने ढंग से यह भी कह सकते हैं कि विश्व का सर्वाधिक ठोस ज्ञान हमें हमारे स्वयं के अनुभव द्वारा ही सही प्राप्त होता है। मनुष्य गलतियाँ करता है फिर उसे गलती की सजा मिलती है। सजा मिलने से उसे वास्तविक अनुभव मिलता है कि मैं ऐसा करूँगा तो इसका सुपरिणाम एवं दुष्परिणाम भविष्य में ऐसा होगा। हर गलती का प्राकृतिक प्रावधान है जो कि मनुष्य की ज्ञान–वृद्धि का सर्वाधिक स्वभाविक व प्राकृतिक मार्ग है। इसे परमात्मा ने हमें यह अमूल्य ज्ञान दिया है। जिसके द्वारा हम नीर–क्षीर–विवेक कर सकते हैं। हमारे मानसिक अर्थात मानस–पटल पर एक दिव्य शक्ति का अस्तित्व है। वह है अंतर्रात्मा। ये वह दैविक शक्ति है जिसके द्वारा मनुष्य को सत्य–असत्य, उत्तम–अधम सतमार्ग–कुमार्ग व अच्छे बुरे का ज्ञान होता है। बोध होता है। मनुष्य की अंतर्रात्मा अच्छे कार्यों से हमेशा सन्तुष्ट रहती है। किन्तु जहाँ मनुष्य अनैतिक कार्य करता है तुरन्त अन्तर्रात्म उसे लज्जित एवं धिक्कारती

भी है। वह दुष्कृत्य के लिए पश्चाताप करता है। झूठ–छल–चोरी, मिथ्या आचरण व व्यभिचार आदि अनैतिक आचरण कभी भी स्थाई नहीं होते। मैंने कितना गलत किया? ऐसे विचार आत्मा में बार–बार चुभते हैं। पश्चाताप एक ऐसी अग्नि का रूप है जो मनुष्य को असत्य–असुचिता तथा निति विरुद्ध कर्मों से मुक्ति दिलाती है, बचाती है।

पश्चाताप केवल निषेधात्मक तत्व ही नहीं पाप के प्रतिकार स्वरूप कुछ करने की प्रेरणा देने वाला तत्व भी है। पश्चाताप करना बुरी बात नहीं है। यदि मनुष्य सहिष्णु पश्चात करता है तो उसका आशय यह है कि उसकी आत्मा मृत नहीं है बल्कि जागृत है। ऐसे मनुष्य में बड़ा पाप करने के बाद भी ऊँचा उठने तथा आन्तरिक आध्यात्म को जागृत करने के लिए पर्याप्त सद्‌गुण विद्यमान होते है। केवल माया, मोह, अशिक्षा, स्वार्थ आदि का अंधकार छाया हुआ है। दुर्गुण बाहर है। अतंस में वास्तविक, सात्विकता की परम शक्ति उपस्थित है, गलती होने पर पश्चाताप करने का अर्थ है कि उस गलती को जीवन में दुबारा ना दोहराना। (संकेत है) हृदय से पश्चाताप करने वालाल मनुष्य आत्म प्रकाश से देदीप्यमान होता है। क्योंकि उसमें सबसे महत्वपूर्ण भविष्य को सुधारने की प्रबल इच्छा शक्ति है। पाप का प्रतिकार तब होगा जब आप पुण्य का, पवित्रता का, सादगी का तथा प्रेम का आश्रय ग्रहण करेंगे।

पश्चाताप करने के लिए आपको आध्यात्मिकता की सौम्य संगत एवं चरित्रवान गुरु का सानिध्य अति आवश्यक है। हम कभी भी इतने बुरे नहीं होते कि कभी सुधर ना सके। उदाहरण के रुप में रत्नाकर डाकू का बाल्मीकि बनना इतिहास का सबसे बड़ा सूचक हमारे समक्ष मौजूद है क्योंकि बाल्मीकि ने प्रभु का पूर्ण आत्मसमर्पण कर स्वयं का सूत्र हमारी संस्कृति में स्थापित किया।

अनुराग का महात्म्य

धर्मप्रेमी बन्धुओं ध्यान दें एवं इस गूढ़ रहस्य की अर्थात अति पवित्र एवं कल्याणकारी शब्द की महिमा जाने इस महत्वपूर्ण संकल्प को दिल में

धारण करके कि मुझे भक्तित्व को जानना है। हमें पवित्र गीता जी का अध्ययन करना चाहिए जिसमें कि दुनियां का कोई प्रश्न ऐसा नहीं है कि जिसका हल पवित्र ग्रन्थ गीता में ना हो, तो आइए अपने मस्तिष्क की उस दिव्य व महान शक्ति जो कि हमें सद्मार्ग की ओर प्रेरित करती है उस शक्ति को पवित्र गीता की पवित्र गंगा में स्नानार्थ ले चलते हैं। जैसा कि पवित्र गीता ग्रन्थ अध्याय (18) के श्लोक नं० 66 में हम जब पहुँचते है तो पाते हैं कि पवित्र गीता ज्ञान दाता भगवान श्रीकृष्ण जी इस श्लोक में कहते हैं कि हे अर्जुन तू सब धर्मों का परित्याग कर मेरी शरण में आ। मैं तुझे सब पापों से मुक्त कर दूँगा। अर्थात् तू सोच मत कर मैं तुझे मोक्ष मार्ग दूँगा यह कथन योगीराज श्रीकृष्ण जी महाराज का स्वयं का है और यह कथन अनुराग की महिमा स्पष्ट करता है। भक्ति (अनुराग) वह पावन गंगा है जिसमें डूबकी लगाने वाला अपने पापों से मुक्त हो सकता है। स्वयं को अर्जुन की तरह इतना पवित्र कर सकता है जिसके लिए भगवान ने स्वयं कहा है कि मैं तुझे मेरी शरण में आने पर पाप मुक्त कर दूँगा। इतनी शक्ति है इस पवित्र अनुराग की गंगा में जिसका बखान करना असम्भव है। काम–क्रोध–मद–लोभ जैसे विकारों से ग्रस्त होकर मानव असत्यता के पथ पर चला जाता है।

उसकी आँखों को कभी धन या यश का लोभ दिखाई दिया तो कभी क्रोध ने विवेक को शून्य किया।

पाप कर्मों से दूर रहने के लिए आत्मा ने कभी मित्र बनकर समझाया तो कभी गुरु बनकर धर्म उपदेश दिया और कभी हितेषी बनकर फटकारा किन्तु सब व्यर्थ।

असत्य कर्म किये इसलिए पाप के घेरे में आ ही गये। प्रभु कृपा से मानव जब प्रायश्चित कर भक्ति अर्थात् अनुराग के मार्ग पर चलता है तो भक्ति की धारा गंगा का अनन्य रूप धारण करती चली जाती है। धीरे–धीरे मैल धुलने लगते हैं। पाप कर्म खत्म होने लगते हैं। आत्मा स्वच्छ हो उठती है। परमात्मा दयालु है। वह पश्चाताप करने पर अतीत के दुष्कर्मों को माफ कर देता है लेकिन बशर्ते व्यक्ति अंतर्मन से यह धारणा निर्धारित करले कि

वह आगे से ऐसा अनैतिक कर्म नहीं करेगा। जैसे ध्रुव ऋषि व प्रहलाद भक्त। जिसने भी परमात्मा को पाया उसने अनन्य एवं सुगम भक्ति से ही पाया, भक्त रैदास जी सुगम भक्ति मार्ग से सन्त रविदास बने तथा अथाह काव्य रचना तथा संगीत प्रेमी बनकर महान ईश प्रिय बने। हमारे सन्तों ने भक्ति के कई मार्ग बताए हैं जैसे ज्ञान मार्ग, आत्म चिन्तन, सत्संग और योग साधना इत्यादि भक्ति प्रेम रहित हो ही नहीं सकती। प्रेम विहलता भक्ति में ईश्वर का साक्षात एहसास करवाती है। गीता के अध्याय नं० 9, श्लोक 29 में भगवान श्रीकृष्ण स्वयं कहते हैं कि मैं सभी प्राणियों में समान रूप से विद्यमान हूँ। न कोई मेरा प्रिय है न कोई अप्रिय। किन्तु जो मुझे भजता है मेरा भक्ति पूर्वक स्मरण करता है। मैं उसमें और वह मुझमें प्रत्यक्ष प्रकट है।

श्लोक– **समोऽयं सर्वभूतेषु नमे द्वेष्योऽस्ति न प्रियः।**
ये भजन्ति तु मा ममि ते तेषु चाप्यहम्॥

इस पावन पवित्र श्लोक दौरान हम मीराबाई का प्रमाण उदाहरण स्वरूप लेवे तो कोई गलत नहीं होगा। मीरा बाई ने भक्ति की और भक्ति की शक्ति से कृष्ण जी में सुद–बुध खो बैठी थी एवं कृष्ण प्रिय होकर देवत्व को प्राप्त किया। वही दूसरी तरफ श्री स्वामी रामकृष्ण परमहंस ने भी माँ काली की उपासना में स्वयं का जीवन अर्पित कर एक महानतम पद प्राप्त किया तथा चैतन्य महाप्रभु की भक्ति में लीन होकर कीर्तन करते थे तथा ईश प्रिय हुये। उनके रोम–रोम में प्रेम की अधिकता व भक्ति की भावना थी वे भी अपनी सुध–बुध खोकर ईश्वर कीर्तन में तल्लीन हो जाते थे।

इस प्रकार इन सम्पूर्ण सन्तों के जीवन से उनकी प्रगाढ़ भक्ति में रुचि एवं परमात्म तत्व को पाने का एकमात्र लक्ष्य हमारे जीवन के लिए एक उचित एवं सच्चे व्यक्तित्व का आदर्श है। हमें समझना चाहिए कि अनुराग में कितनी महानता है। अनुराग भक्ति का ही दूसरा नाम है। हमें अनुराग धारण करना चाहिए जिससे हमारा सन्तत्व जाग्रत होगा और हम परमेश्वर के परम शान्ति के धाम को प्राप्त कर सकने में सफलता प्राप्त कर एक आने वाली पीढ़ियों के लिए आदर्श एवं उदाहरण साबित होंगे। स्वयं का कल्याण होगा।

नकारात्मक चिन्तन

हमारी सोच हमेशा सकारात्मक होनी चाहिए। नकारात्मक चिन्तन प्राणी की बुद्धि को खण्डित कर देता है और धीरे–धीरे बुद्धि क्षीण होकर व्यक्ति का व्यक्तित्व गिरने लगता है। यह ईर्ष्या, नफरत व प्रतिशोध, लोभ और क्रोध की आग में जलने लगता है। ऐसे व्यक्ति से सुख और शान्ति रूठ जाती है। इसलिए नास्तिकता एवं नकारात्मकता से हमें बचना चाहिए। आप कुछ भी अर्जित कर लें, कितनी ही शोहरत हासिल कर लें लेकिन आपकी नकारात्मक सोच आपके पतन का कारण बनती है। उदाहरण स्वरूप जैसे रावण। यानि रावण के पास अतुलित एवं अथाह धन सम्पति थी किसी भी प्रकार का कोई सुख रावण से वंचित नहीं था। लेकिन नकारात्मक सोच रावण् के पतन का रास्ता बनी, कारण बनी। अहंकार रूपी नकारात्मक सोच ने उसकी बुद्धि को खण्डित कर दिया और नकारात्मकता के कारण पतन हुआ। इसी तरह जो व्यक्ति वासनाओं के वशीभूत होकर अनैतिक आचरण करता है उसका नष्ट हो जाना निश्चित है। रावण को लंका की सम्पति देखकर लोभ हुआ और उसने यक्षों की लंका पर आक्रमण कर लंका को जीता और स्वयं लंकाधिपति अर्थात् लंका का राजा बन गया। उसने यक्षों के अधिपति कुबेर से उनका धन और वाहन छीन लिया, रावण की यह प्रवृत्ति अहंकार और नकारात्मक सोच का परिणाम है। इसी तरह जो लोग अपने माता–पिता और गुरु का आदर सम्मान नहीं करते तथा जिन्हें साधु–संतों को सताने में और उनसे सेवा लेने में प्रसन्नता का अनुभव होता है उनके ये कृत्य भी नकारात्मक सोच के परिणाम हैं और इस अन्याय का परिणाम भी कर्मकर्ता को समयानुसार प्राप्त होता है। ऐसे व्यक्ति अहंकार में इतने ग्रस्त होते हैं कि उन्हें अपने आप से बड़ा सद्बुद्धिमान कोई भी शख्स नजर नहीं आता और कुछ अल्पज्ञ ज्ञान का भण्डारण कर अपने आपको पूर्ण परमात्मा बताने लग जाते हैं और अल्पबुद्धि से धर्म के नाम पर भी शास्त्रार्थ की चुनौती देने लग जाते हैं और उनकी चुनौती सिर चढ़ने पर कोई सामाजिक शख्स उनकी चुनौती स्वीकार करता है तो ये नकारात्मक सोच वाले डर के

मारे कांप जाते हैं और खुलकर सामने भी नहीं आते। ये सब नास्तिकता का परिणाम है। लेकिन उनकी ऐसी गलत धारणा ही उनके पतन का कारण बनती है जो व्यक्ति माता–पिता के प्रति कृतज्ञ नहीं है, गुरु के प्रति कृतज्ञ नहीं है तो सोचो वह व्यक्ति किसके प्रति कृतज्ञ हो सकता है? दूसरों की सेवा करना एवं सामाजिक क्षेत्रों को बढ़ावा देना। संतों का स्वभाव होता है। संतों का सत्संग करने से और उनके बताये हुये मार्ग पर चलना देवत्व को पाना है। संत संगत से हमारे अन्तःकरण की गति शुद्ध होकर हमारा मन सेवा भाव में लगेगा। सेवा भाव भी ईश्वर प्राप्ति का एकमात्र उपाय है। सेवा से ही मेवा मिलती है। वस्तुतः आध्यात्म का आधारभूत उद्देश्य यही है कि व्यक्ति नकारात्मक सोच और नकारात्मक प्रवृतियों जैसे लोभ, ईर्ष्या, क्रोध और अहंकार तथा दूसरों का शोषण व उत्पीड़न करने से बचे। सच तो यह है कि आध्यात्म का मूल उद्देश्य व्यक्ति के व्यक्तित्व में सकारात्मक प्रवृतियों जैसे दया, करुणा, अहंकारहीनता, धैर्य और परोपकार आदि सद्गुणों को विकसित करना है। व्यक्ति के मजबूत व्यक्तित्व से राष्ट्र भी मजबूत होता है। हमें हमारे मजबूत व्यक्तित्व एवं सकारात्मक सोच के लिए प्राचीन शास्त्रों जैसे शिक्षा, वेद, मनुस्मृति एवं अन्य दर्शन शास्त्रों का सहारा लेने में कही भी झिझक महसूस नहीं करनी चाहिए। शास्त्रों के स्वाध्याय से हमें नास्तिकता का अंत कर आस्तिकता का बीज हमें हृदय में बौना चाहिए।

हमें हमारे ग्रन्थों–शास्त्रों पर गर्व होना चाहिए तथा नीतिपूर्वक इनका पठन–पाठन करते हुये। शास्त्रानुकूल गतिशील रहना चाहिये तथा हमें योग्यता हासिल करनी चाहिए जिससे की हम सब मिलकर चल सके और धर्म रक्षा कर सके और जरा गौर करना चाहिए अपने प्राचीनतम इतिहास पर एवं समझना चाहिये कि पिछले युगों में जितने भी राक्षस, दैत्य हुये। सबने तपस्या तो देवताओं से ज्यादा एवं गहरी की लेकिन उन्होंने तपस्या के फल का नकारात्मक सोच से दुरुपयोग किया तो आज उनका नामोनिशान भी मिट गया। केवल बुराई के उदाहरण मात्र बनकर रह गये है। इसलिए हमें हमारी सभ्यता नकारात्मक नहीं बल्कि सकारात्मक ही बनाने का प्रयास रखना चाहिए। नकारात्मकता पतन का ही दूसरा नाम है।

नीति का लक्ष्य

हम हमारे नैतिक आचरणों से ही नीतिवान एवं चरित्रवान बन पाते हैं। जैसे कि 'नेता'। इन्सान नीति से नेता बनता है कुर्सी से नहीं। हमारी सुनीति हमें सुपथ पर रखती हुई उचित मार्गदर्शन के साथ मंजिल तक पहुँचाती है और हमें सामाजिकता प्रदान करती है जैसे कि धर्म शब्द है। इस पवित्र शब्द से हम अलग–अलग प्रकार से शिक्षा लेते हैं। यहाँ धर्म शब्द का अर्थ है नैतिक एवं जनकल्याण के मूल्यों को धारण करना। पूजा, पाठ, प्रार्थना, स्तुति, साधना आदि कर्मकाण्ड धर्म के छोटे अंग हैं। नैतिकता से यहाँ अभिप्राय है कि धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को अर्जित करने में सुचिता व जन कल्याण की भावना भी निहित हो। यदि काम और अर्थ को अर्जित करने के लिए कोई व्यक्ति अनैतिक आचरण करता है तो उसका अंतिम लक्ष्य मोक्ष उससे उतना ही दूर होता चला जाता हैं इसलिए हमारे सनातम धर्म के पवित्र ग्रन्थ गीता में भगवान् श्रीकृष्ण जी ने कर्म, अकर्म और निष्कर्म की व्याख्या बड़े ही अनूठे हिसाब से की है।

कर्म ही प्रधान होते हैं और हमें कर्म के आधार पर ही फल प्राप्त होते हैं। कर्म, अकर्म, विकर्म की सर्वोक्त जानकारी हेतु पवित्र श्रीमद्भागवत गीता (अध्याय 3 श्लोक नं 1 से 42 तक तथा अध्याय नं. 5 श्लोक नं. 1 से 29 तक) स्वाध्याय करें एवं व्याख्या को समझकर अपने जीवन चरित्र में ढालें। बताना चाहूँगा कि विकर्म वे कर्म होते हैं जिन्हें एक मनुष्य को नहीं करना चाहिए। जैसे पाप कर्म स्वयं करना या परोक्ष रूप से इनका साथ देना या मूकदर्शक बने रहना। आज नैतिक मूल्यों का यह हाल है कि एक मानव अपने स्वार्थों की पूर्ति हेतु दूसरे मानव को निगलना चाहता है। बेईमानी से संचित अर्थात अर्जित किया हुआ धन सच्चे अर्थों में वह अर्थ नहीं है। जिसकी चर्चा हमारे आध्यात्म में की गई है एवं इसका परिणाम भी हमारे धर्म–शास्त्रों में बताया गया है। संसार में जीवन मरण का चक्र केवल इसलिए चल रहा है क्योंकि जीव अपने अर्जित कर्मफल से मुक्त नहीं हुआ है और वह अपने कर्मों के भुगतान एवं नये कर्मफल तैयार कर रहा है। इसलिए जन्म और मृत्यु को सबसे बड़ा दुःख कहा गया है।

अच्छे कर्मों के फल को भी यदि मनुष्य खुद को समर्पित करता है तो उसके प्रतिफल को भी भोगने के लिए उसे जन्म लेना पड़ेगा। इसलिए भगवान ने अर्थात श्री योगीराज श्रीकृष्ण जी महाराज कहते हैं कि हे अर्जुन तू कर्म कर फल की इच्छा मत कर। फल को तू मुझे अर्पित कर। इसके बाद ही तू इसके प्रतिफल से बच सकेगा और इस जन्म–मरण के बन्धन से मुक्त होकर मेरे परम धाम को प्राप्त होगा। परम शान्तित्व को प्राप्त करेगा।

इसलिए इस विषय पर गोस्वामी तुलसीदास जी महाराज ने भी श्री रामचरित मानस में कहा है कि शुभ और अशुभ कर्मों के अनुसार ही परमात्मा व्यक्ति अर्थात् प्राणी को फल प्रदान करता है। प्राणी अशुभ कर्म करते वक्त सोचता है कि उसे कोई नहीं देख रहा है। यही प्राणी अर्थात् इन्सान की सबसे बड़ी भूल है। प्राणी यह भूल जाता है कि ईश्वर अंश अर्थात परमात्मा अंश हमारी आत्मा सब कुछ देख रही है। इसी में अर्थात् हमारी आत्मा में हमारी सारी कर्म वीडियो रिकार्डिंग हो जाती है।

इसलिए हमें मनुष्य योनि प्राप्त करने के मूल लक्ष्य यानि मोक्ष प्राप्ति के बारे में सोचना चाहिए और जीवन के सुपथ पर चलते हुये नैतिक मूल्यों और जनकल्याण की भावना को ध्यान में रखते हुये सुकर्म कर फल को प्रभुपाद समर्पित करने का निश्चय रखना चाहिए।

हमारा कर्म ही हमें पूजित करवाता है और हमारा कर्म ही हमें लज्जित करवाता हैं अतः जीवन में कर्मों की नीति शुद्ध सारिणी बद्ध करने में प्रयत्नशील रहना चाहिए और नेतृत्व का लक्ष्य निर्धारित करना चाहिए।

कामयाबी अर्थात सफलता

सम्प्रति हम ऐसे आधुनिक युग में जी रहे हैं जहाँ एक तरफ भौतिक समृद्धि चरम पर है तो वही दूसरी तरफ चारित्रिक पतन की गहराई भी कम नहीं है। आधुनिकीकरण में उलझा मानव कामयाबी की नित नई परिभाषाऐं खोजता रहता है और स्वयं की इच्छाओं के रेगिस्तान में भटकता रहता है। ऐसे समय में सापेक्ष एवं सत्य सफलता और सच्ची सुख शान्ति की प्यास से

आंकुल–व्याकुल हर व्यक्ति मृग (हिरण) मरिचिका के समान भ्रमित होकर अनेकों मनोरोगों का स्थान बनता हुआ रोगग्रस्त होता जा रहा है। हम मनुष्यों में से कितने लोगों को इस बात का ज्ञान है कि जीवन में सफलता प्राप्त करना अर्थात् कामयाब होना और सफल जीवन जीना ये दो अलग–अलग बातें हैं। यह जरूरी नहीं कि जिसने अपने जीवन में साधारण कामनाओं को हासिल कर लिया हो वह पूर्णतः सन्तुष्ट और प्रसन्न ही हो। इसलिए हमें गंभीरतापूर्वक इस बात को समझना चाहिए कि इच्छित फल प्राप्त कर लेना ही पूर्ण कामयाबी नहीं है जब तक हम अपने जीवन में नैतिक व आध्यात्मिक मूल्यों को महत्व नहीं देंगे तब तक यथार्थ में सफलता पाना हमारे लिए मुश्किल ही नहीं बल्कि नामुमकीन है। नैतिक मूल्यों के बगैर हासिल की गई सफलता केवल क्षण भंगुर सुख के समान होती है। अर्थात् 'जिसका सुख हम केवल अल्प समय के लिए ही प्राप्त करते हैं।

हमने सागर की गहराइयों में जाकर मोती खोजना तो सीख लिया किन्तु अपने मन की गहराई में जाकर मोती यानि सुख–शान्ति के बीज को खोजना अब तक नहीं सीख सके। सामान्यतः कई बार जब हम हमारे युवाओं का तथा मिलनशील पुरुषों का अवलोकन करते हैं तो यही अधिकांशतः सुना जाता है कि अभी भी लोग जाग्रत नहीं होने वाले विद्यमान हैं।

कुछ लोग बोलते हैं कि हम कामयाब नहीं हो सकते। क्योंकि हमारी तकदीर और परिस्थितियां ही कुछ ऐसी ही हैं। इस तथ्य से साबित होता है कि लोगों में यानि हमारे समाज में तामसिकता प्रवेश कर लोगों के आत्मविश्वास को खो रही है। सिर्फ नई एवं स्थापित बुरी संस्कृति। हमें बुरी संस्कृति से बचना चाहिए और आत्मविश्वास के साथ हमें अपना ध्येय सुनिश्चित करना चाहिए और अपने मानस पटल में एकाग्रता रूपी मजबूत लक्ष्यशक्ति निश्चित करनी चाहिए। इतना कर गुजरने पर सफलता स्वयं ही हमारी ओर आकर्षित होती चली आयेगी। अर्थात् हमारे नेतृत्व की दासी बन जायेगी। इसे प्राप्त करना हर मनुष्य का जन्मसिद्ध अधिकार है। परन्तु यदि हम अपनी असफलताओं के बारे में ही सोचते रहेंगे तो सफलता को कभी भी हासिल नहीं कर पायेंगे। कई बार स्वाभाविक है कि प्रथम आघात में पत्थर ना भी

टूटे। उस कठोर पत्थर को तोड़ने के लिए कई बार चोट लगानी भी पड़ सकती है। इसलिए सदैव अपने लक्ष्य को सामने रखकर आगे अग्रसर होने की जरूरत है। हमारे धैर्य की जरूरत है। पत्थर को आखिर टूटना ही पड़ता है।

हमारी मेहनत और हमारा निर्धारित लक्ष्य जरूर हमें कुछ कालोपरान्त लाभ देता है लेकिन यह तय है कि देता जरूर है। हौसला रखते हुये जीवन को समर्थ बनाना तथा कर्म करते रहना यही मार्ग हमारा श्रेष्ठ पथ बनकर हमारे लिए फूलों का हार बनता है। लेकिन समयानुसार। कवियों ने भी कहा है–

धीरे–धीरे रे मना, धीरे सब कुछ होय।
माली सिंचे सो घड़ा, ऋतु आये फल होय॥

आत्मविश्वास शैली

हमारा आत्मविश्वास ही हमें सम्पूर्णता प्रदान करने वाला अति महत्वपूर्ण मित्र गुण रूप है। आत्मज्ञान, आत्मविश्वास और आत्मसंयम में सर्वाधिक महत्वपूर्ण निधि आत्मविश्वास ही है। आत्मविश्वास ही व्यक्ति के अर्थात् जनमानस के जीवन की सफलता की कुंजी है। आमतौर पर प्रत्येक व्यक्ति के शारीरिक सौष्ठव में अन्तर के साथ ही उसके स्वभाव में भी भिन्नता होती है जिसके आधार पर उसके निजी व्यक्तित्व का निर्धारण कर सकना संभव होता है। व्यक्ति के आत्मविश्वास के संवर्धन में संचित संस्कार, पारिवारिक परिवेश और समाज आदि की महत्वपूर्ण भूमिकाएं रहती हैं। प्रत्येक महापुरुष के जीवन में अति महत्वपूर्ण योगदान सिर्फ आत्मविश्वास का रहा है। उन्होंने आत्मविश्वास के सहारे ही विषम परिस्थितियों से संघर्ष करते हुए अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सकने में सफल होते रहे हैं। सत्यता तो यह है कि आत्माविश्वास के अभाव में बलशाली व्यक्ति भी अपने जीवन में असफलता ही प्राप्त करते हैं।

वही हमारे प्राचीन इतिहास में ऐसे अनेकों उदाहरण है–जब किसी

बीमारियों से असक्त व्यक्ति ने अपने सशक्त आत्मविश्वास के सहारे उल्लेखनीय सफलताऐं अर्जित की। जीवन की लौकिक व आध्यात्मिक सफलताओं की प्राप्ति में आत्मविश्वास की प्रमुख भूमिका रहती है। जब व्यक्ति अपने आप पर पूर्ण विश्वास नहीं करता तो यही कमी उसे असफल करती है अर्थात् आत्मविश्वास की कमी।

जिस व्यक्ति में आत्मविश्वास का दर जितना अधिक होता है। वह व्यक्ति अपने आपको अनंत शक्ति (परमात्मा) और कामयाबी के उतना ही निकटतम पाता है। अतः स्पष्ट है कि आत्मविश्वास ही सफलता का मूलाधार है। आत्मविश्वास विहीन व्यक्ति अपने जीवन में सदैव असफल व दुखी रहते हैं क्योंकि वे संघर्ष्ज से विरत रहते हैं। लेकिन जिस व्यक्ति ने अति कठिनतम कर्म को पूरा करने के लिए आत्मविश्वास के साथ दृढ़ निश्चय कर लिया वह प्रतिकूल परिस्थितियों को भी अपने अनुकूल करने की शक्ति प्राप्त कर लेता है। सच तो यह है कि स्वयं के आत्मविश्वास के अभाव में बाहुबल, बुद्धिबल, सैन्य बल आदि सभी बल महत्वहीन हो जाते हैं। इस तथ्य पर अनेकों मनोवैज्ञानिकों और मनोचिकित्सकों की राय में आत्मविश्वास से रहित व्यक्ति प्रतिभा से परिपूर्ण होने के बावजूद अपनी क्षमताओं का प्रदर्शन करने में विफल रहता है। अतः आईये आत्मनिरीक्षण कर आत्मविश्वास के साथ जीवन के पथ पर कदम आगे बढाऐं ताकि सफलता की राह और अधिक आसान हो सके। वास्तव में सफलता का सबसे बड़ा मूल मन्त्र यही है। इसी से मानवविविधता का जीवन सरलता से सहज और कामयाब कर सकने में पारंगत हो सकता है। हमारी मजबूत नींव ही हमें भूचालों से वंचित रखती है। आत्मविश्वास की शक्ति हमें प्रभु भक्ति में भी लीन कर मोक्ष की ओर अग्रसर करती है।

सम्पूर्ण शास्त्रों एवं ग्रन्थों से भी हमें आत्मनिर्भर होकर आत्मविश्वास की ही प्रेरणा मिलती है।

इसी प्रकार आश्रम व्यवस्था–ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और सन्यास आदि चार आश्रमों का निरुपण किया गया है। सर्वप्रथम ब्रह्मचर्य आश्रम में ब्राह्मण, क्षत्रिय तथा वैश्य–द्विज–बालकों का उपनयन–संस्कार करने की

विधि है जिससे वे वेदोक्त कर्म करने के भी अधिकारी बनते हैं। इस आश्रम में विद्याध्ययन के बाद गृहस्थ आश्रम में अग्नि और देवता के साक्षी में विवाह संस्कार का प्रतिपादन किया गया है तथा गृहस्थ आश्रम के नियमों का प्रतिपादन हुआ है। उसके बाद सांसारिक प्रपंचों से निवृत होकर एक मात्र प्रमाण प्रभु की उपासना में संलग्न होने के लिए वानप्रस्थ तथा सन्यास आश्रम की व्यवस्था का निरुपण हुआ है। यही नाथ विधान वेदोक्त ज्ञान है।

संस्कृति–धर्म में विचार मन्थन एवं साकार निराकार का प्रमाण

काफी समय से हमारे पूज्य गुरुदेव जी हमें अपने तीक्ष्ण एवं यशस्वी भण्डार कोष से ज्ञान प्रदत्त कर हमें कृतार्थ एवं दिव्यनुग्रहित करते आये हैं। प्रातः स्मरणीय गुरुदेव के सौम्य मुखारविन्द से निकले उनके अनेकों उदाहरण हैं लेकिन मैं (शुक्राईनाथ) आपको उस कथन की ओर अपना ध्यान एकाग्र करने का निवेदन करूँगा जो मेरे सतगुरु देव (महन्त श्री योगीराज चेताईनाथ जी महाराज) द्वारा मुझे किसी अहम् तथ्य पर टिप्पणी करते हुये मेरे मस्तिष्क पर हाथ रख कर आशीर्वाद देते हुये निर्देशानुसार दिया एवं समता और सहानुभूति स्वरूप हो दिया–उन्होंने कहा कि बेटे

पत्थर के भी टुकड़े कर दे, ऐसी सिख बिराणी हो।
वो घर मुश्किल से बसता, जिसमें हरदम खिंचा तानी हो॥

पूज्यपाद सतगुरु जी के इस कथन ने मेरे दिल एवं भविष्य पर मानो ऐसी छाप छोड़ दी कि में इसका बखान नहीं कर सकता और आज जब चारों तरफ देखता हूँ या फिर इतिहास उठाकर देखता हूँ तो गुरुदेव का यह उपदेश हमारे देश की संस्कृति व देश के भविष्य का हनन करने में इसी नीति का काफी अहम किरदार निभता हुआ नजर आता है। उदाहरण–जैसे अंग्रेजों ने भी हमारे देश की संस्कृति पर हमला किया और उसे मिटाना चाहा, कूटनीतियाँ अपनाई, हमें तोड़ना चाहा, हमारे बीच एक दूसरे के प्रति प्रतिशोध की भावनायें भरी गई तथा हम देरी से समझे–फूट डालो और राज

करो की नीति अपनाई हम आपस में ही विराणी (पराई) सीख मान–मान कर हम उजड़ते रहे और हमेशा खिंचातानी (तनाव) में रहे तो हम अंग्रेजों के गुलाम हो गये।

ये हमारे देश की संस्कृति को मिटाने की अंग्रेजों की चली हुई चाल थी, लेकिन फिर परमात्मा की कृपा से हम किसी भी तरह बलिदान देकर अंग्रेजों के चंगुल से छुटे (आजाद हुये)। ये अति दीर्घ उदाहरण है।

दूसरे उदाहरण के लिए हम थोड़ा और इतिहास की गहराई तक जाते हैं तो पाते हैं कि अंग्रेजों से पहले मुस्लिमों ने हिन्दुस्तान को लूटा तथा परतन्त्र रखा। उन्होंने हमारे सभ्य देश की मातृ–भूमि के साथ खिलवाड़ की तथा हमें एक–दूसरे से प्रतिशोध यानि घृणा से भिड़वा दिया। हम लड़ते रहे, मुगलराज आ गया, हम पराई सीख मानकर लुटते रहे हमें क्या मिला? आखिर परतन्त्रता अर्थात् गुलामी बस।

उदाहरण मैं देता रहूँ तो अथाह उदाहरण हैं हमारे पराई सीख से आपस में लड़कर एक दूसरे से नफरत कर हम बसना तो दूर प्रायः इतना पीछे खिसक गये कि अब उभर पाना मुश्किल हो गया है। गुरुजी के पावन उपदेशों में मैं देख पा रहा हूँ कि आज भी हम ज्यादातर एक दूसरे से प्रतिकूल (टूटे–टूटे) रहते हैं। गुरुदेव की ज्ञान गंगोत्री से मैं आप सब देशवासियों के पवित्र भविष्य की कामना करता हुआ कहना चाहता हूँ कि अब भी सम्भल जाओ और इन बैर–भावनाओं से छुटकारा पाकर शास्त्रों से आदर्शता पाकर जीवन धन्य बनाओ, संगठन ही शक्ति है। हम टूटे नहीं, झुके नहीं, रूके नहीं बस आगे बढ़ें। शोक दरिद्रता से बचे। काफी समय से देख रहा हूँ कि कुछ असामाजिक तत्वों ने हमें धर्म के नाम पर भी लड़ना सिखाया तथा सिखा रहे हैं। सनातन धर्म को तोड़ने की साजिश रची जा रही है। लेकिन हमें समझदारी का परिचायक बनना ही होगा। कोई हमें वेदों के नाम पर लड़वा रहा है तो कोई पुराणों को कपोल कल्पित तथा भ्रष्ट बताकर हमारे देवी–देवताओं की खिल्ली उड़ाने में लगे हुये हैं तो आओ मेरे हिन्दू वतनवासियों अब हम वेद–पुराण और अन्य दूसरे पवित्र ग्रन्थों के बारे में समझें–क्रमानुसार।

वेद–आप सभी प्रबुद्ध वर्ग के एक हिस्सेदार हो, आप जानते हैं कि वेद एक

ऐसी कृति है जो अति प्राचीन है और वेदों से पूर्व धरती पर कोई भी धर्म शास्त्र या पुस्तक रूप में भण्डारित कोई भी कृति विद्यमान नहीं थी। इस उत्तम राज के कारण ही अति प्राचीन ग्रन्थ धरती के वेद को हिन्दुत्व का हर वर्ग ईश्वर की सर्वप्रथम वाणी एवं दिव्य ज्ञान की खान मानता है जो कि भारत की ही नहीं अपितु दुनियाँ में सबसे प्राचीन है इसीलिए ये सर्वश्रेष्ठ है।

हमारे हिन्दुत्व का प्रबुद्ध वर्ग वेदों में कोई त्रुटि नहीं मानता और बात भी सही है।

क्योंकि परमात्मा के ज्ञान में कोई त्रुटि नहीं। इसमें त्रुटि मानना तो बहुत दूर इस विषय पर कुछ भी विचार नास्तिक नहीं होने चाहिये। इस उपरान्त दूसरा पवित्र ग्रन्थ हमारा है।

श्रीमद्भागवत गीता–यह भी एक ऐसा ग्रन्थ है जो कि इसे भी हमारा सनातन एवं हिन्दु सभ्यता का प्राचीन ग्रन्थ ही नहीं अपितु प्रत्यक्ष परमेश्वर का प्रदत्त ज्ञानकोष मानते हैं और है भी यही सत्य। क्योंकि श्रीमद्भागवत गीता के अध्ययन में हम पाते हैं कि इसमें स्वयं भगवान श्रीकृष्ण जी बताते हैं कि वे ही इस सम्पूर्ण दुनियाँ के पालनकर्ता का श्रेय लेते हैं और ये ही संहारकर्ता भी है। जैसे प्रमाण के लिए पढ़े पवित्र गीता अध्याय 11 के श्लोक 32 में तथा गीता अध्याय 10 में श्लोक 26 से 42 तक। सृष्टि के पालन से संहार तक (नाना रूपों का वर्णन) का श्रेय कृष्ण जी को ही जाता है।

इसी प्रकार इस अति पवित्र ग्रन्थ में स्वयं पढ़कर देखो मैं पृष्ठाभाव में ज्यादा प्रमाण नहीं दे पाया हूँ। तो इससे साफ प्रमाणित होता है कि इस पवित्र ग्रन्थ में भी कोई त्रुटि नहीं है। (यदि कोई इसे माने या न माने इति सत्। ये ही ग्रन्थ रूप में ईश्वरीय वाणी है। संभवतः इनमें कोई शक नहीं है।

ये ईश्वरीय ग्रन्थ थे। अब आपका ध्यान मैं (शुक्राईनाथ) कुछ मानव कृत ग्रन्थों की ओर ले जाना चाहूँगा। जो इन्सान ने अर्थात् साधु–सन्तों ने बनाये थे इसका सबसे बड़ा उदाहरण है पुराणों का यानि पुराण शास्त्र–

पुराण–इस कृति में हिन्दु धर्म को अच्छे से सुसज्जित किया गया है तथा ऐसी मान्यता है कि पुराण ग्रन्थावली को जीवन का सुचारू रूप प्रदान

करने हेतु ऋषि–मुनियों, विद्वानों ने प्रकट किया था अर्थात् बनाया गया था और पुराणों में ईश्वर के प्रति शरीरधारी व अनेकोंनेक रूप में होने का भी जिक्र है। तथा कुछ अन्य मनभाषी कृतियाँ लिखी गई हैं। तो हमें सोचना होगा कि ये पुराण क्या है? और दूसरी तरफ 4 वेद तथा पवित्र गीता क्या है? पुराणों में त्रुटि मिलना स्वाभाविक बात है। आम बात है क्योंकि ये कोई ईश्वरीय ज्ञान नहीं बल्कि मानवीय ज्ञान है। यही इसका अति दीर्घ कारण है। ये इन्सान का भण्डारित ज्ञान है।

ये हमारे चिरकाल में हुये साधु–सन्तों, ऋषियों–मुनियों के दिमाग की उपज है। जैसे ऋषि शौनक जी तथा सुत जी प्रमुखतः उदाहरण एवं प्रमाण हैं।

तो स्वाभाविक एवं सिद्ध बात है कि इन्सान गलतियों का पुतला है। पुराण में संवाद के रूप में कथा बताई गई जैसे शौनक ऋषि ने अपने शिष्य को कथा सुनाई इत्यादि। खुद पढ़ें। (स्वयं का ज्ञान देता है प्रमाण।) दूसरा कारण पुराणों की त्रुटि का। जैसे कि पुराणों में मूर्ति पूजा मान्य है और अभ्रमवादी मजहब के लोग जैसे मुस्लिम, यहूदी और ईसाई ये सब मूर्ति पूजा के खिलाफ थे। **यहूदी–यहूद हजरत ईसा के देश के वासी।**

जब हिन्दुस्तान इसकी गुलामी में था इसके अधीन था तो इन अन्यायिओं ने हमारे पुराणों में भारत की संस्कृति को खंडित करने के लिए काफी भारी मात्रा में फेरबदल और मिलावट कर इन्हें भ्रष्ट किया और हमारी प्राचीन सनातन धर्म की चिरकालीन संस्कृति के मन्दिरों देवालयों एवं धरोहरों को तुड़वा दिया था जिनकी संख्या अनगिनत थी। नालंदा विश्वविद्यालय जो कि बिहार में है दुनियां का सबसे प्राचीन विश्वविद्यालय था उसमें हिन्दु तथा बौद्ध धर्म के पवित्र एवं प्राचीनतम ग्रन्थ थे किन्तु बख्तियार खिलजी नामक क्रूर मुस्लमान शासक ने (राजा ने) इस विश्वविद्यालय को जलाकर राख करा दिया जिसमें हमारे साहित्य ही नहीं बल्कि हिन्दु और बौद्ध धर्म के छोटे–छोटे बच्चे भी जिन्दा जल गये थे तथा हमने हमारे शुद्धि एवं बुद्धि के सूचक ग्रन्थों को काफी हद तक खो दिया। लुट गये हम! पराधीनता से आपसी खिंचातानी के साथ बस हम चलते रहे। खामियाँ वाले पुराणों को

ज्यादातर बढ़ा दिया गया। मुस्लिमों द्वारा तथा जिनका राज यहाँ रहा उन्होंने।

आज ऐसा सुना जाता है प्रायः कि आज कुछ सच्ची पुराण और साहित्य अभी भी अल्प मात्रा में हमारे दक्षिण भारत के कुछ प्राचीन मन्दिरों में मिल जाते हैं और हम (लेखक का संकेत) कोशिश कर रहे हैं कि उन्हें खोजकर प्रकाशित करेंगे तथा अब बाजारों में बिक रहे पुराण तथा साहित्य लगभग मिलावटी हैं।

अब इस दौरान प्रश्न यह उठता है कि जब पुराणों में मिलावट हुई और ये सिर्फ इन्सान का ज्ञान है तो इनमें वर्णित देवी–देवताओं को पूज्य क्यों माना जा रहा है? और ये देवी–देवता ऐकेश्वर वाद में यकीन रखते हैं या नहीं? तो इन प्रश्नों के उत्तर हेतु आपको स्वयं शास्त्रानुभव करना होगा। पुराणों के गहरे अध्ययन में आप पायेंगे कि पुराणों में ऐकेश्वर वाद ही है और परमात्मा के अनुरूप के बारे में ही बताया गया है। जैसे इसके उदाहरण हेतु देखिये–विष्णु पुराण 5,33,46 इसमें कहा गया है कि विष्णु और शिवजी दोनों की एक ही सत्ता है। दोनों में कोई फर्क ही नहीं है और जिसने फर्क किया वो नर्क भोगेगा। तो वहीं दूसरी ओर शिव महापुराण के रुद्रसंहिता के अध्याय 2 और 3 में लिखा है कि जो इन्सान शिव और विष्णु में फर्क करेगा वह घोर नरक का भागी होगा इत्यादि ऐसे–ऐसे उदाहरण पुराणों में बहुत मिल जायेंगे और भी स्वयं पढ़े (दूसरों की सीख मत रक्खें)

अब इतना कुछ जानने के बाद एक और प्रश्न उठता है कि क्या प्रमाण है कि देवी–देवता सत्य है? पुराणों की कहानी सत्य है?

इन प्रश्नों के कुछ साक्षात प्रमाण मैं (शुक्राईनाथ) आपको यहाँ देने जा रहा हूँ। जरा गौर फरमाइयेगा।

वर्तमान के इस अतिव्यस्त जमाने में किसी के भी पास इतना समय नहीं है कि वो 4 वेद या 18 पुराण छः दर्शन एवं अन्य गूढ़ रहस्यों को पढ़ सके। क्या कोई गीता भी पढ़ पाये? उनके पास खुद के विषयों की ही पुस्तक इतनी है कि वो ही पढ़ पाना मुश्किल है। समय की दौड़ में किसी को कुछ भी समझ नहीं आ रहा है। ऐसे में आदमी मन्दिर की तरफ दौड़ता है और कुछ

ऐसी पौराणिक कथाओं पर आधारित मन्दिर इस भारत भूमि पर स्थित हैं जिनको झुठलाना असंभव है और इनके चमत्कार भी आँखों से देख कर झूठलाना असत्य ही सिद्ध होगा।

इनमें से कुछ मैं यहाँ पेश करने जा रहा हूँ जो कि प्रमाणित एवं वास्तविक है–सुप्रसिद्ध भी हैं।

1. मध्य प्रदेश के मेहर जिले में माता शारदा का मन्दिर पहाड़ पर बना हुआ है जो कि प्राचीनतम है। वहाँ पर ऐसी मान्यतायें हैं कि यहाँ पर आलाह और उदल दोनों भाईयों में से आलाहा (जो कि देवी माँ का अनन्य भक्त था) अमर था ओर वो आज भी मन्दिर में आता है और सिर्फ ब्रह्म मुहूर्त में। यह घटना किसी की कपोल कल्पित हो सकती है। लेकिन सुबह–सुबह माता रानी के मन्दिर में फूल चढ़े हुये मिलते हैं। जहाँ पर यानि दरवाजा खोलते है वहाँ पर ना कैमरा गर्भगृह में काम करता है ना रात को कोई पण्डित वहाँ पर रुकता है फिर भी यह सत्य है प्रमाणित है मध्य प्रदेश के जिला मेहर में जाकर स्वयं देखें तथा पता लगाये कि बन्द मन्दिर में फूल कहाँ से आते हैं।

2. दूसरी घटना जो कि सत्य ही नहीं अपितु शास्वत है।

उज्जैन का कालभैरव मन्दिर–

इस मन्दिर को लगभग आधा भारतवर्ष जानता है। वहाँ पर अवधुति काल भैरव का मन्दिर है जहाँ भैरवनाथ जी महाराज की मूर्ति पर मदिरा (शराब) चढ़ाई जाती है।

यह एक ऐसी पौराणिक मान्यता है कि यहाँ भैरव ने सोमरस (मदिरा) का पान करके ब्रह्मा जी की एक गर्दन काट दी थी। अब ये घटना भी बेशक कपोल कल्पित व दन्त कथा होगी लेकिन आँखों के सामने प्रत्यक्ष रूप में देखकर वैज्ञानिक भी हैरान थे और मन्दिर के आसपास खुदाई कर अथाह प्रयास मदिरा खोजने के लिए किया। लेकिन एक कतरा भी शराब का यहाँ पर ना ढूंढ सके और निराशा के सिवाय कुछ ना हाथ लगा। आगे की कार्यवाही में आज तक साईंटिस्ट ये नहीं खोज पाये कि मूर्ति में जो मदिरा प्रवेश करती दिखती है वो आज तक जाती कहाँ है?

सभी को हार मान कर निराशा के साथ विदा होना पड़ा तथा इंग्लैण्ड की रानी से लेकर एक से एक महान कहलाने वाले वैज्ञानिकों ने भी जोर लगाया। लेकिन सभी इस मन्दिर के आगे नतमस्तक होते चले गये।

3. जम्मू कश्मीर का यह तीसरा वह सच जो व्यक्ति के व्यक्तित्व के बाहर का है। जरा गौर फरमाईयेगा।

जम्मू कश्मीर के किश्तवार जिले के माचिल गाँव में एक माता दुर्गा का मन्दिर है जो कि जम्मू शहर से लगभग 400 किमी. दूरी पर है। यहाँ माता के मन्दिर के सामने पहाड़ में एक ऐसा शिवलिंग है जहाँ तक पहुँच पाना मुश्किल और नामुमकिन है। ना कोई जाता है वहाँ पर पहुँचने का कोई मार्ग भी नहीं है क्योंकि ये शिवलिंग दुर्गम पहाड़ियों में है। वहाँ पर चमत्कार ये होता है कि ये शिवलिंग हर कुछ सेकेण्डों या मिनटों में अपना रंग बदलता है लेकिन नियमित और संध्या आरती के वक्त एक ज्योत की लौ इस लिंग से मिलकर माता दुर्गा के मन्दिर के गुम्मज तक जाति है। ये प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देता है। किन्तु कैमरे में कैद नहीं होता है। यह आँखों से देखना एक सत्य है। इस पर भी बहुत रिसर्च हुये हैं लेकिन कुछ हासिल नहीं हुआ। यह एक शाश्वत प्रमाण है जो इसको देखता है वो इसे झुठला नहीं पाता।

प्रमाण–स्वयं देखें।

राज्य–जम्मू कश्मीर

जिला किश्तवार

गाँव माचिल

4. गुजरात के सूरत में एक गाँव में रफलेश्वर महादेव का मन्दिर है। जहाँ ऐसी मान्यता है कि कोई तपोनिष्ठ शिव का महान भक्त था। इसकी तपस्या से खुश होकर शिव भगवान प्रकट हुये और उसे दर्शन देकर कृतार्थ किया और वहाँ भी ऐसी ही मान्यता है कि वह शिवभक्त मरणोपरान्त आज भी आता है तथा सुबह–सुबह शिवलिंग पर फूल चढ़ाता है। हो सकता है कि लोगों के लिये यानि उन लोगों के लिए जो वहाँ के उस स्थान से अपरिचित हैं उनके लिये ये दिव्य चमत्कार भी कपोल कल्पित हो, लेकिन जो उस क्षेत्र के निवासी हैं उनके लिए ये स्थान विचाराधीन एवं हैरानी का सबब है तथा

कहाँ से आते हैं ये पुष्प अपने आप शिवलिंग पर यह विषय काफी चर्चा में तथा शिव के चमत्कार के रूप में आज भी समाहित हैं। वैज्ञानिकों को अपनी हर तरकीब आजमाने को वहाँ भी मजबूर होना पड़ा तथा खाली हाथ लौटना पड़ा। ये प्रमाणित बात है कि यहाँ पर भी वैज्ञानिकों की तरकीब नाकामयाब होने पर उन्हें घुटने टेकने पड़े। असमर्थ ही रहे।

5. हिमाचल के कांगड़ा की ज्वालादेवी माता इनको भी हर कोई जानता है। काफी सुप्रसिद्ध है ये स्थान। जहाँ पर माता के नौ रूप नौ देवी ज्वाला रूप में समाहित आज भी प्रत्यक्ष है। अभी भी कोई जो इस वास्तविकता से अनभिज्ञ है वो ज्वाला जी हिमाचल में जाकर इस वृतान्त का प्रमाण अपनी आँखों से आज भी जलती हुई इस अखण्ड ज्योत से ले। जो कि सनातन के चिरकाल से चली आ रही है। बिना घी व बिना किसी ज्वलनशील पदार्थ के सिर्फ पानी में। सब कोई वहाँ जाने से पहले यकीन नहीं करते लेकिन बाद में (देखने के बाद) किसी के लाख समझाने पर भी इस चमत्कार को झुठला नहीं सकते। इस स्थान के कुण्ड (पानी का टैंक) से बिना किसी तेल या घी के जल रही इस अखण्ड प्रज्वलित ज्योति को देखकर वैज्ञानिक यहाँ भी पूरा जोर लगाकर निराशा के साथ ही लौटे। प्रमाण ज्वाला जी हिमाचल प्रदेश स्वयं देखें।

6. राजस्थान के जैसलमेर को कौन नहीं जानता। वहाँ के तनोत माता मन्दिर से कौन अनभिज्ञ है। वहाँ माता के मन्दिर में वो रासायनिक सामग्री जो पाकिस्तान ने हमारे विनाश हेतु डाली थी यह घटना सन् 1971 की खौफनाक घटना एक चमत्कार बनकर, याद बनकर दीर्घकालीन के लिये रह गई। यानि बताना चाहूँगा कि तनोत माता के मन्दिर में जो आज भी एक प्रदर्शनी बनाकर रखे हुये जिन्दा बम एवं अन्य रासायनिक सामान है वो सब 1971 में हुये पाकिस्तान के अत्याचार को मुँह तोड़ जबाब (माता द्वारा बम फटने नहीं दिया) के प्रत्यक्ष सबूत एवं गवाह है कि मन्दिर में गिरे हुये बम सब सुरक्षित रहे और बम फट नहीं सके। मन्दिर का कुछ भी नहीं बिगड़ पाया। अपनी आँखों से आप भी जिन्दा जागता सबूत स्वयं अब भी देख सकते हैं। इसे क्या कोई जुढला सकता हैं

7. बिहार में बाबा बैजनाथ धाम–इस धाम के चमत्कारों को तो अंग्रेजों ने भी स्वीकार किया।

अंग्रेज शासक कैप्टन मार्टीन भी मानकर गये और अंग्रेज शासक कैप्टन मार्टीन ने हमारे ईष्ट शिव के साक्षात् दर्शन किये। बताया जाता है कि जब कैप्टन मार्टीन पठानी सेना से घिर गये थे तब इस कठिन परिस्थिति में उन्होंने शिव का मन में ध्यान किया जिससे सच्ची श्रद्धा होने के कारण शिव ने उनकी रक्षा की थी। क्योंकि उनकी पत्नी लेडी मार्टीन ने भी हमारे विद्वानों और पंडितों की सलाह से अपने पति की प्राण रक्षा हेतु शिव उपासना की और उस दौर में मन्दिर निर्माण हेतु उन्होंने उस समय में 5000 रु. की धनराशि भी प्रदान की थी। ऐसा हम नहीं कहते बल्कि वही मन्दिर की एक शिलालेख में लिखा हुआ है और यदि हम इसके अन्तर्गत हमारे लोकल इलाके की बात करें तो हरियाणा, राजस्थान, पंजाब, गुजरात तथा हिमाचल प्रदेशों में भी हम ऐसे चमत्कारिक उदाहरण पेश कर सकते हैं जिनमें शिव ने नाना सिद्ध योगियों, साधुओं के रुप में साक्षात खुद आकर अनेकोनेक लोक कल्याण के काम तथा जन दिशा निर्देशन किया है। इन आँखों देखे चमत्कारों को कोई भी झुठला नहीं सकता। जैसे–

1. हरियाणा में रोहतक स्थित अस्थल बोहर में सिद्ध योगेश्वर श्री बाबा मस्तनाथ जी का इतिहास–

बाबा मस्तनाथ मठ आज से लगभग 350 वर्ष पूर्व के इतिहास का एक प्रमुख अंग है तथा यह दिव्य स्थली महा सिद्ध योगीराज बाबा मस्तनाथ जी एवं उनके अनन्य शिष्य रणपत मानधाता (रणपत नाथ जी, धातानाथ जी) की तपोस्थली भी कहलाती है क्योंकि इन सिद्ध योगेश्वरों ने यहाँ भारी कठोर तप किया था एवं तप के ऐश्वर्य से इन्होंने यहाँ बहुत से चमत्कार भी दिखलाए थे। बाबा मस्तनाथ जी के जीवन चरित्र को बहुत से मुगल शासकों ने भी लोहा माना तथा बाबा जी द्वारा बहुत से मुगल सम्राट राजाओं को अपनी दिव्य योग माया से प्रभावित कर सनातन नाथ संस्कृति के सामने झुकने पर भी विवश किया एवं बाबा के जीवन की हर प्रत्येक क्षण की घड़ी चमत्कार ही बनकर प्रकाश में आई जिसकी पूर्ण जानकारी हेतु पढ़ें 'बाबा

मस्तनाथ चरित्र' नामक पुस्तक जो कि गुरु गोरक्षनाथ अखाड़ा, हरिद्वार से प्रकाशित है। इस मठ में प्राचीन एवं भव्य इमारतें काफी लम्बे चौड़े विस्तार में फैली हुई दिव्य स्थली की शोभा बढ़ा रही थी तथा इस पावन एवं पवित्र स्थली में 300 वर्ष पूर्व से ही बाबा मस्तनाथ जी सहित ग्यारह (11) अखण्ड ज्योति देशी शुद्ध घी से चली आ रही है जो कि सिद्ध विभूतियाँ इस प्रकार है। पीर श्री तोतानाथ जी, श्री सिद्ध मेघनाथ जी, श्री सिद्ध मेहरनाथ जी ,श्री सिद्ध चेतनाथ जी, श्री सिद्ध पूर्णनाथ जी एवं सिद्ध श्रयोनाथ जी महाराज इस प्रकार से सभी पीढ़ी–दर–पीढ़ी अस्थल बोहर के गद्दीनशीन मठाधीश्वर हुये तथा मठ के साथ–साथ समाजिक क्षेत्रों में भारी मात्रा में अग्रणीय रहें तथा आज वर्तमान (2013) के बाबा मस्तनाथ मठ के मठाधीश्वर महन्त श्री योगी चान्दनाथ जी महाराज द्वारा मठ के सारे प्रांगण को गहरी नजर से एवं सद्विवेक द्वारा निरीक्षण करने पर भवन की प्राचीन इमारत जीर्णोजीर्ण (कमजोर) प्रतीत हुई अतः महाराज श्री द्वारा पूरा आश्रम पुनः स्थापित करने का निर्णय लिया गया और एकाएक इस निश्चय एवं दृढ़ संकल्प को लेकर बाबा मस्तनाथ मठ का निर्माण कार्य शुरु करने के लिए पूरे मठ की प्राचीन इमारतों को तोड़कर बाबा मस्तनाथ समाधि सहित पूरे आश्रम का काम शुरु कर दिया तथा भवन निर्माण को अक्षर धाम दिल्ली एवं अक्षर धाम गुजरात के अहमदाबाद से भी भव्य स्वरूप तथा ज्यादा खर्च से निर्मित करने का संकल्प धारण कर कार्य प्रगति पर जोर–शोर से चालू कर रखा है जिसकी अनुमानत खर्च लागत इसे 3 से 4 अरब रुपये है अर्थात तीन सौ पचास से चार सौ करोड़ रुपये की लागत से बाबा मस्तनाथ समाधी स्थल एवं भव्य आश्रम का निर्माण पूरा होने की सम्भावना है। मठ में लगभग अठारह (18) संस्थायें चल रही हैं जिनमें शिक्षा के साथ–साथ स्वास्थ्य को महत्वता देकर आज बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय से लेकर आश्रम में हस्पताल एवं बड़ी–बड़ी इमारत दिल्ली हाईवे के दोनों तरफ धरती माता की शोभा बढ़ा रही है। महाराज श्री चांदनाथ जी द्वारा हरियाणा प्रदेश में शिक्षा को जितना बढ़ावा दिया गया है उतना कोई अन्य सन्त द्वारा कम ही देखने को मिलता है। वर्तमान में हमारी नाथ सम्प्रदाय द्वारा महाराज जी के कार्य एवं उनकी

मेहनत और राष्ट्र सेवा के साथ नाथ सम्प्रदाय की सेवा को देखकर महन्त जी को बाबा मस्तनाथ का ही स्वयं स्वरूप मानती है तथा हमारे सम्पूर्ण नाथ संत व भक्तजन पूज्य श्री चान्दनाथ जी महाराज को देवता के समान दृष्टि से अलंकृत करते हैं। पूज्य महन्त जी के गुरुदेव महन्त श्री श्रयोनाथ महाराज भी हरियाणा प्रदेश में शिक्षा एवं स्वास्थ्य को पूर्ण महत्व देकर हरियाणा प्रदेश में जन सैलाब की अनन्य सेवा की तथा स्वयं स्वास्थ्य मंत्री रहे।

अपने पूज्य गुरुदेव के मार्ग का ही अनुसरण पूर्वक कर महाराज श्री चान्दनाथ जी भारत की सन्त महिमा एवं बाबा मस्तनाथ मठ की शोभा बढ़ा रहे हैं तथा महन्त जी स्वयं बताते हैं कि जो कोई भी भक्त सच्ची श्रद्धा से समाधि पर शीश नवाता है और मनोरथ माँगता है उस भक्त की श्री बाबा अवश्य इच्छा पूरी करते हैं। बाबा जी की समाधि पर प्राचीन समय से ही एक किलो गाय का घी (अखण्ड ज्योति वास्ते) एवं एक काला कम्बल चढ़ाने की प्रथा है और ये बाबा मस्तनाथ जी द्वारा ही भक्तों के उद्धार हेतु दिया हुआ वचन हमारी नाथ संस्कृति मानती है जिसकी मनोकामनाऐं पूर्ण होती हैं उन भक्तों द्वारा आज भी घी व कम्बल समाधि स्थल पर चढ़ाने की रिवाज कायम है। इस उपरोक्त सत्य को कोई भी झुठला नहीं सकता।

बाबा के चमत्कारों की जितनी टिप्पणियाँ लिखूँ कम ही होगी और कभी भी पूर्ण नहीं हो सकती। श्री बाबा मस्तनाथ साक्षात् गोरक्षनाथ जी महाराज के ही अवतार हैं जिनकी महिमा बखान करना तथा लिखना असंभव ही सिद्ध होगा।

अतः बाबाजी की माया अपरम्पार है जिसको लाखों–करोड़ों लोगों की श्रद्धा का केन्द्र माना जाता है। फाल्गुन महीने की नवमी तिथि को बाबा जी की समाधि पर विशाल मेला भरता है जिसमें अनगिनत असंख्य भक्त जन आते हैं और बाबा श्री मस्तनाथ जी की पूजा–अर्चना कर मठाधीश्वर महन्त श्री चान्दनाथ जी महाराज से पावन आशीर्वाद प्राप्त कर स्वर्ग के सुख जैसा अनुभव महसूस करते हैं तथा सौभाग्य एवं धन्य जीवन का बीज बोते हैं।

2. गाँव कोथ कलां, जिला हिसार, हरियाणा में बाबा श्री काले पीर जी महाराज का प्राचीनतम गूढ़ एवं रहस्यमयी इतिहास–

दादा काला पीर समाधि स्थल–हरियाणा प्रदेश में एक से एक अहम स्थान रखने वाले नाथ पंथ के सिद्ध संत योगेश्वर हुये हैं जिनमें से सबका जिक्र करना एवं लिखना एक अति दीर्घ कार्य है लेकिन कुछ सन्तों का विवरण मैं यथासम्भव दे रहा हूँ–

कोथ कलां जिला हिसार की सीमा में बसने वाले गाँव कोथ में भी काले पीर जी महाराज का प्राचीन समाधि स्थल है जहाँ दादा काले पीर जी महाराज का दिव्य इतिहास मिलता है। बताया जाता है कि काले पीर जी महाराज द्वारा किसी सन्त स्पर्द्धा के दौरान एक दीवार (ओटड़ा) को भी दो कदम चलने पर विवस कर दिया गया था और दादा काले पीर जी महाराज की समाधि आज भी जागृत होन का प्रत्यक्ष प्रमाण वहाँ के आसपास की स्वयं जनता ही है तथा प्रतिदिन सैकड़ों की संख्या में वहाँ आश्रम में भक्तजन शीश नवाकर बाबा का आशीर्वाद प्राप्त करते हैं। वहाँ के **महन्त पीर श्री नन्दाईनाथ जी महाराज** आश्रम का सर्व संचालन करते हैं तथा गऊ माता की सेवा हेतु गौशाला बनाकर गऊओं की सेवा में स्वयं तत्पर रहते हैं। बाबा श्री पीर नन्दाईनाथ जी महाराज का कहना है कि बाबा काले पीर जी महाराज द्वारा लगभग 300 साल पूर्व में अपनी योग माया द्वारा दो कदम तक चलाई हुई रोड़े एवं चुन्ने से निर्मित दीवार आज भी मौजूद है और पीर जी महाराज द्वारा उक्त दीवार को संभालकर जन दर्शनार्थ रखा हुआ है। बाबा काले पीर जी महाराज के आश्रम का भी भवन निर्माण प्रगति पर है जो कि महन्त श्री पीर नन्दाई नाथ जी महाराज के सानिध्य एवं देखरेख में विस्तृत है। इस उपरोक्त दीवार एवं दादा काले पीर जी महाराज को भी कोई झूठला नहीं सकता।

3. हरियाणा के महेन्द्रगढ़ स्थित गाँव नावां सतवाली के पास 5 किमी. पर **सिद्ध बाबा श्री समताईनाथ योगाश्रम** के बाबा श्री सिद्ध समताईनाथ जी सहित अन्य सिद्धों के शाश्वत चमत्कार एवं उनका इतिहास बाबा समताई नाथ जी द्वारा मिट्टी के पुतलों को भी तीन सीढ़ी चढ़ा दिया गया था। यह एक

बड़ा सत्य उदाहरण है। (इसको झुठलाना पाप कर्म ही होगा)

4. योगाचार्य श्री गुरु गोरखनाथ मन्दिर, गोरखपुर

हिन्दुस्तान के कोने–कोने में फैली हुई विस्तृत नाथ सम्प्रदाय गुरु गोरक्षनाथ जी द्वारा पूर्व से प्रचलित है। इसके प्रवर्तक का श्रेय भी स्वयं गुरु गोरक्षनाथ जी महाराज को ही जाता है। इस सम्प्रदाय में अनेकों सिद्ध महासिद्ध रूपों में गोरक्ष स्वयं आकर सृष्टि सन्तुलन हेतु चमत्कारों से व सामाजिक प्रणाली को गति प्रदान करने हेतु अनन्य कर्मों से धर्म रक्षा में अवतरित होते हैं जैसा कि उपरोक्त लिखित प्रमाणों में इसका सम्पूर्ण विवरण मैं दे चुका हूँ। इसके अन्तर्गत एक विशाल छवि वाला तथा यश कीर्ति वाला अन्य बड़ा उदाहरण गुरु गोरक्षनाथ मन्दिर गोरखपुर (उत्तर प्रदेश) है। इस मन्दिर अर्थात् मठ से कौन अनभिज्ञ है तथा इसकी प्रसिद्धि से कौन अनजान है जैसा कि इस विशाल नगर का नाम ही जिन गुरु गोरक्षनाथ जी के नाम पर ही आधारभूत है उस मठ का यश भला क्या कम हो सकता है?

इस प्रश्नोत्तर में गुरु गोरक्षनाथ मन्दिर गोरखपुर के वर्तमान उत्तराधिकारी एवं केन्द्रीय सांसद (लोक सभा सदस्य) महन्त योगी आदित्यनाथ जी महाराज का कहना है कि यहाँ वर्षों से अखण्ड धूने की भभूत (भभूती) प्रसाद के रूप में भक्तजनों में वितरित की जाती है तथा बाबा मस्तनाथ मठ अस्थल बोहर रोहतक (हरियाणा) में जिस तरह तीन सदियों से पूर्व की अखण्ड ज्योति आज भी अटूट अखण्ड स्वरूप है। ठीक उसी तरह यहाँ भी सदियों से चल रहे गुरु गोरक्षनाथ जी के अखण्ड धूने की प्रचण्ड अग्नि अखण्ड है तथा भक्तजन प्राचीन परम्पराओं से चली आ रही भभूत लेने की रीति–रिवाज को न भुलाते हुए सत्य नीति पूर्वक प्राचीन परम्पराओं में आज भी सम्पूर्णतया आश्रित है तथा भभूत के साथ युग पुरुष क्रान्तिकारी राष्ट्र सन्त श्री सिद्ध योगेश्वर बाबा दिग्विजय नाथ जी महाराज की पुण्य समाधि स्थल पर एवं गोरक्षनाथ मन्दिर में मत्था (शीश) टेक (झुका) कर श्रद्धापूर्वक हमारे परम पूज्य गुरुदेव शीलात्मा योगेन्द्र श्री अवेधनाथ जी महाराज, अध्यक्ष योगी महासभा, भूतपूर्व सांसद के चरणों में शुभ आशीर्वाद लेकर

पुण्य सौभाग्य को प्राप्त होते हैं।

अतः इतना कुछ जानने के उपरांत यहाँ का इतिहास भी अवर्णनीय है। क्योंकि जहाँ भभूत मात्र से ही सर्व कार्य पूर्ण सम्पन्न होते हो वो स्थान क्या वर्णन में आ सकता है? कभी नहीं तथा इस पवित्र स्थान के वर्तमान उत्तराधिकारी योगी आदित्यनाथ जी आज लोक सभा सांसद भी है तथा पहले भी 2–3 बार सांसद रह चुके हैं। योगी जी अपनी पूर्ण निष्ठा से जन कल्याण के कार्यों में लीन रहते है तथा पूर्णतया समाज एवं देश को समर्पित है। उनका देश प्रेम देखकर हृदय फूला नहीं समाता एवं हम कह सकते हैं कि वे हिन्दुस्तान की शान है। इस भभूति से कार्य सिद्धि के चमत्कार को भी झुठलाना असत्य ही सिद्ध होगा।

5. महेन्द्रगढ़ स्थित सतनाली से लोहारु रोड पर 2 किमी. पर स्थित गाँव पथरवाँ, **बाबा श्री चन्द्राईनाथ योगाश्रम** का प्राचीनतम इतिहास एवं आसपास के गाँव वालों की असीम अटूट श्रद्धा एवं समर्पण भाव तथा समाधि के आज भी जाग्रत होने का मैं खुद (शुक्राईनाथ) भी प्रमाण हूँ व हमारे परम पूज्य गुरुदेव जी पर बाबा श्री चन्द्राईनाथ जी की जिस तरह सर्वप्रथम कृपा हुई। इसे कोई झुठला नहीं सकता।

बाबा चन्द्राईनाथ जी की आज भी अपने भक्तों की इच्छा पूर्ण करना तथा **गाँव पथरवा** (जिला महेन्द्रगढ़ हरियाणा) के साथ आसपास के गाँवों में आज भी बाबा आशीर्वाद मुद्रा रखते हैं। यह प्रत्यक्ष प्रमाण है।

इसी प्रकार छठा उदाहरण जो कि अति प्रभावशाली है जैसे गाँव कण्डेला, जिला जीन्द, हरियाणा में बाबा श्री सिद्ध योगेश्वर कृिष्णाईनाथ जी एवं बाबा श्री निमगिरि जी महाराज दो भिन्नतम योगी हुये जो आज भी गाँव कण्डेला पर विपति के समय में मददगार है। बाबा निमगिरि जी का आश्रम गाँव में तालाब के किनारे पर स्थित है जहाँ पर बाबा ने जिन्दा समाधि ली (धरती ने समाधि हेतु जगह बाबा के आग्रह करने पर स्वयं दी)।

गाँव की मान मर्यादा पर कोई भी विपत्ति आने पर गाँव वाले पूर्व में भी और आज भी बाबा श्री कृिष्णाईनाथ जी एवं बाबा श्री निमगिरि जी को समर्पित होते हैं। बाबा भी उनकी रक्षा हेतु किसी ना किसी रूप में आकर

सबकी विपत काल में रक्षा करते हैं। इसके कई बड़े उदाहरण भी हैं जैसे–

जीन्द के राजा द्वारा काफी वर्ष पहले अचानक गाँव कण्डेला पर हमला तोप–गोलों से भारी सेना के साथ आकर विद्रोह करना तथा सिद्ध योगी निमगिरी जी द्वारा गाँव को सुरक्षित बचाना व राजा को अपनी दिव्य योग माया से परास्त करना। अपने आप में यह पहला बड़ा उदाहरण है।

लगभग सन् 2000 में हरियाणा के गाँव कण्डेला एवं खाप पंचायत द्वारा अपने हक के लिए सड़क (जीन्द से चण्डीगढ़) हाईवे जाम कर रोष प्रदर्शन कर रहे लोगों पर अनेक नीतियां अपनाकर सरकार द्वारा गोलीबारी की गई। इस दौरान यह मसला महीनों भर चलता रहा। ज्यादा जनाक्रोश होने पर सरकार द्वारा आंसू गैस के गोले, लाठीचार्ज तथा पुलिस के साथ–साथ घोड़ा पुलिस भेजकर गोलीबारी की गई जिससे विपत्ति काल के समय में ग्रामीणों ने अपने इष्ट सन्तों से (उनकी समाधि से) प्रार्थना करने पर अचानक 28 गाँवों की खाप पंचायतों की उपस्थिति में गाँव के एक बाल्यावस्था बालक के मुखारविन्द से जोर से आवाज निकली की कोई भी नदी पार (छोटी माईनर/नहर का संकेत) नहीं करना किसी को कुछ नहीं होगा। इसी बाणी को पूर्ण विराम लगा ही था कि अचानक गाँव की दूसरी तरफ से गाँव का खागड़ (अमर बैल) दौड़ता हुआ आया और उसने पुलिस के साथ–साथ आई घोड़ा पुलिस जो कि गोलीबारी कर रही थी को युद्ध में आकर पूरे रोष और जोश से टांडता हुआ (फुँकारता हुआ) अपने खुरों से जनता तथा पुलिस के बीच स्थित माईनर पर एक लम्बी रेखा जैसी प्रतीत होने वाली लाईन निकाल दी और घोड़ा पुलिस सहित सभी सरकारी अफसरों के व पुलिस की गाड़ियों के छक्के छुड़ा दिये। इस दौरान गाँव की तरफ जो थे उनको गोलियों ने मूर्छित तो किया लेकिन एक भी आदमी की मृत्यु नहीं हुई और इनमें से कुछ लोगों की गर्दन को भी गले के भाग में से गोलियों ने पार किया लेकिन जिन्दा बचे आज (2013) भी मौजूद हैं। आखिर गाँव ने जंग जीत ही ली और फिर पूरे गाँव ने खागड़ की अन्त समय तक पूरी श्रद्धा से सेवा कर उसे पूजित भी किया। आज भी गाँव खागड़ को देवता की तरह पूजता है।

यह भी किसी को कपोल कल्पित लगे तो कण्डेला गाँव तथा जिला

जीन्द में स्वयं प्रमाण देखें वहाँ खागड़ की समाधि बनी हुई है। उस खागड़ ने युद्ध उपरान्त कई सालों बाद अपने प्राण पूरे कर ब्रह्मलीन हो गया।

इनके सिवाय अनेकों ऐसे प्रमाण और भी है लेकिन पृष्ठाभाव में मैं लिखने में असमर्थ हूँ।

तो देवियों और सज्जनों ये थे कुछ भारत वर्ष के मन्दिर व सिद्ध सन्तों के चमत्कार से सम्बन्धित प्रमाण जिनको भारत ने ही नहीं बल्कि विदेशियों के अत्यन्त तीव्र बुद्धि वैज्ञानिकों ने भी माना है। झुके हैं हमारी मातृभूमि के सामने सभी।

हमारे मन्दिर, हमारी सभ्यता वाकई बाहरी लोगों के लिए एक हैरानी का सबब है। इस अपनी पवित्र संस्कृति के आगे ना कोई विज्ञान चल पाता है ना कोई वैज्ञानिक, ना कोई टोना–टोटका ना कुछ और।

बस, जब लोगों को अपनी आँखों पर विश्वास नहीं होता तो लोग ईश्वरीय चमत्कार मानकर सिर झुका कर चले आते हैं।

इस सम्पूर्ण कथन से यह सिद्ध होता है कि ना मूर्ति पूजा गलत है और ना ही निराकार ईश्वर की उपासना करना गलत है। एकलव्य भी कठोर निष्ठावान होने के कारण मूर्ति पूजा में पारगंत हुये। सक्षम हुये। वेद, पुराण, गीता, रामायण, उपनिषद, दर्शन, मनुस्मृति इत्यादि सनातन समय से हैं। धरती पर जब कोई मजहब नहीं होता था। सनातन धर्म के अलावा! और इनके उद्देश्य सनातन धर्म को तोड़ना तो बिल्कुल नहीं था बहुत से हमारे योद्धा भी हुये हैं जिन्होंने निराकार ईश्वर की उपासना की तो बहुत से हमारे ऐसे भी महान योद्धा हुये हैं जिन्होंने साकार रूप में ईश्वर को पूजा जैसे सिक्ख होने के बाद भी गुरु गोविन्द सिंह जी ने माता चण्डी की उपासना की, वही वीर महाराणा प्रताप ने शिव की उपासना की तथा हमारे वीर शिवाजी ने भी शिव–शक्ति की उपासना की इत्यादि।

तो कहना चाहूँगा मेरे वतनवासियों मेरे सनातनी भाईयों ध्यान दो कि हमारा सनातन धर्म कोई मजहब नहीं है बल्कि यह तो एक संस्कृति थी, एक ऐसी संस्कृति जहाँ इन्सान को हर चीज के लिए स्वतन्त्रता थी भले ही वह ईश्वर की उपासना करने का तरीका हो या कुछ और...। ईश्वर तो बस

इन्सान को अच्छे–बुरे कर्मों का दण्ड देकर दण्डित कर सकता है। नहीं तो ईश्वर हमारे मित्र के रूप में भी जाना जाता है। हम अर्थात् इन्सान ईश्वर को जिस रूप में भी सच्चे दिल से याद करें, उस रूप में वो मदद करने चले आते हैं। मजहब धर्म को बन्धन में बाँध देता है और हमारी हिन्दू सनातन संस्कृति है। हमें आपस में मिलकर एक होकर जीना सिखाती है। तो मेरे हिन्दुस्तानी धर्म प्रेमी बन्धुओं आपस में लड़ना और खींचातानी की भावना को छोड़कर एक हो जाओ मूर्तिपूजक और निराकार ईश्वरवादी दोनों ही अपनी जगह पर सच्ची हैं इनके ठोस प्रमाण मैंने आपको ऊपर दे दिये हैं।

एकजुट होकर भारत को इस्लामिक षड़यन्त्रों से बचाने में तथा धर्म रक्षा में आगे आओ अन्यथा याद रखना परम पूज्य गुरुदेव जी का वह उपदेश कि **वो घर मुश्किल बसता जिसमें हरदम खींचातानी हो।** हम तनाव में रहने से कभी भी सुचारु रूप से बस नहीं सकते।

नोट–

जो मानव वेदानुसार आचरण करते हैं और मूर्ति पूजा के विरोधी है उनसे मैं निवेदन करना चाहता हूँ कि वे पवित्र वेदों में सर्वप्राचीन वेद ऋग्वेद संहिता के मण्डल नम्बर 7 तथा सूक्त नं 86 व मन्त्र नं. 7 को अवश्य पढ़ें और मुझे (नाथ सम्प्रदाय) को इस प्रश्न का उत्तर देवें कि जब वेद भगवान यदि मूर्ति पूजा स्वीकार करते हैं तो आप कौन से व्याकरण से वेद अध्ययन करते हो? –लेखक

विशेष–

हमारे देश को 'हिन्दुस्थान' नाम से भी पुकारा जाता है इसलिए यहाँ के हम सभी नागरिक अपने आपको हिन्दु भी लिखते हैं लेकिन मित्रों! ये हिन्दु शब्द हमारे किसी भी प्राचीन वेद–शास्त्रों में वर्णित नहीं है। वेद–शास्त्रों में सिर्फ 'सनातन' शब्द ही हमारा धर्म सूचक एवं जाति सूचक दृष्टि से वर्णित है। हिन्दु कोई धर्म नहीं बल्कि देश के नाम की संज्ञा का सूचक है।

अतः हम सब सनातन धर्मी हैं तथा सनातन को ही हिन्दु शब्द का हमारा प्रबुद्ध वर्ग सूचक मानता है।

एक नजर राष्ट्र की ओर

महात्मा गाँधी को पूरा भारत अच्छी तरह जानता है। अतः ध्यान दीजिए कि गाँधीजी कहते थे कि कोई हमें एक थप्पड़ मारे तो दूसरा गाल आगे कर देना चाहिए। इस पर सोचना यह है कि यदि दूसरे गाल पर भी चांटा जड़ दिया जाए तो हम तीसरा गाल कहां से लायेंगे। इस बात पर एक और भी प्रश्न उठता है कि क्यों न पहले ही थप्पड़ का जवाब तीखे अंदाज में दे दिया जाये। इससे हो सकता है कि चांटा मारने वाले की दोबारा हिम्मत ही ना पड़े। कुछ ऐसा ही हमारे हिन्दुस्तान में पाकिस्तान तथा अन्य चीन जैसे गद्दार देशों द्वारा फैलाये जा रहे आतंकवाद के मामले में ईंट का जवाब पत्थर से देकर हिन्द की ताकत से अवगत कराना चाहिए। क्योंकि आतंक का खेल खेलने वाले आतंकवादियों को हम गिरफ्तार कर पूरी सुरक्षा और सुविधा उपलब्ध कराते हैं और ये गद्दार देश हमारे हिन्दुस्तान की आबरू एवं इज्जत के साथ मौत का सौदा कर मौत का नंगा नाच रूपी खेल खेलते हैं तथा भूतकाल में भी खेला है और हिन्दुस्तान की सरकार इन देशों की मेहमाननवाजी करती है। उन आतंकियों को अपना पक्ष मजबूत करने के लिए वकील भी मुहैया करवाती है और करोड़ों की धनराशि भी खर्च करते हैं। आखिर क्यों? जागो हिन्दुस्तानियों! आखिर कब तक माँ भारती की इज्जत लूटती रहेगी और हम भारती पुत्र कब तक बेकसूर होते हुए भी चांटे पर चांटे खाते रहेंगे और बेकसूर

गाल पर त्रासदी सहन करते रहेंगे–हमें भी जवाब देना चाहिए तभी इन देश के साथ गद्दारी करने वालों को भय की परिभाषा समझ में आयेगी–जैसे कि हरियाणा में एक कहावत है कि भय बिना प्रीत नहीं!! जब तक भारत से दुश्मनों को भय नहीं होगा तब तक आतंकियों को हिन्द की प्रीत भी नहीं होगी। हिन्दुस्तान का बच्चा–बच्चा मुम्बई हमले को भुला नहीं पाया। मुम्बई में आतंकी हमले करने वाला पाकिस्तानी आतंकवादी **अजमल कसाब**। इस आतंकी को हम वर्षों तक ढोते रहे। लाखों–करोड़ों खर्च किया, फांसी की सजा में इतनी देरी हुई कि भारत को आर्थिक नुकसान झेलना पड़ा।

इस कलयुगी राक्षसों को कड़ी से कड़ी सजा देनी चाहिए न कि किसी प्रकार की कानूनी मदद।

अति खुशी की बात तो यह है कि इस संवाद को संसद सभा में उठाया गया है। हिन्दुस्तान से जुड़े देश की इज्जत के इस मामले में कोई भी राजनैतिक गलत हस्तक्षेप नहीं होना चाहिए। कुछ समय पहले ही अखबारों एवं मीडिया के जरिये सुना था कि राज्य सभा में आतंकवाद के मुद्दे को काफी जोर–शोर से उठाया गया, जहाँ कहा गया कि हिन्दुस्तान के दयालु हृदय का ही पड़ोसी राष्ट्र फायदा उठा रहे हैं जिससे देश में आतंकवाद के प्रसार को पड़ोसी देशों से प्रोत्साहन मिल रहा है और हमारे देश की सुरक्षा और अर्थव्यवस्था के लिए खतरा पैदा हो गया है। बताना चाहूँगा कि हाल ही में गिरफ्तार किये गये आतंकवादी **अब्दुल करीम टूण्डा** ने कड़ी पुलिस पूछताछ

में बताया कि देश में आतंकवादी गतिविधियाँ जारी हैं और आतंकवादी मौके की तलाश में है। दूसरी ओर एक आतंकवादी पिछले दिनों भारत–नेपाल के पास से गिरफ्तार किया गया जिसका नाम **यासीन भटकल** है एवं इस आतंकी ने बताया कि पाकिस्तान में मुजाहिदीनों को परफेक्ट प्रशिक्षण एवं आतंक मचाने हेतु साजो–सामान दिया गया।

इससे साफ है हिन्दू वतन वासियों कि हमारे पड़ोसी देश बार–बार भारत के विनाश हेतु युद्ध एवं संग्राम जैसे हालात पैदा करते हैं और दूसरी ओर चीन भी बार–बार अपनी दुष्ट नजर भारत पर डाल रहा है, लेकिन हम चुप हैं। इसलिये इससे साफ स्पष्ट है कि आतंकवाद देश की सुरक्षा से जुड़ा एक महत्वपूर्ण मुद्दा है और इससे पूरी कठोरता के साथ निपटा जाना चाहिए। आतंकवादियों के पकड़े जाने के बाद कुछ स्वदेशी आवाजें ही उनके बचाव हेतु उठने लगती हैं तथा पकड़े गये आतंकवादियों को **कानूनी सहायता मुहैया कराना** दिल दहलाने वाली बात है। अतः ऐसा नहीं होना चाहिए। क्योंकि इससे उन्हें पकड़ने वाले हमारे सेना तथा पुलिस के जवानों एवं देश की जनता का मनोबल टूटता है। इस प्रकार की घटना पर वोट बैंक को बढ़ाने हेतु कुछ राजनैतिक पार्टियाँ भी राजनीति करने लग जाती हैं। इस विषय पर मैं राजनेताओं से भी कहना चाहूँगा कि जहाँ देश की आन–बान–शान पर कलंक लगने जैसी कोई घटना हो वहाँ पर राजनीति की तरफ कम और देश की तरफ ज्यादा देखना चाहिए, कुछ अल्पसंख्यक राजनेता वोट की खातिर

अर्थात कुर्सी की खातिर देश को भूल जाते हैं। लेकिन अब हमारा हिन्दुस्तान सुशिक्षित भी है और जागृत भी है। इसलिए ऐसे दलों को, राजनेताओं को जनता की तरफ से भ्रम में रहने का भ्रम दूर करने का उपाय खोज लेने की राय तथा देश सेवा हेतु अग्रणीय हो राष्ट्र को आतंकियों के षड़यन्त्रों से बचाने का आग्रह एवं संदेश देता हुआ कहना चाहूँगा कि राजनैतिक दल जागृत हो देश सेवा साफ आत्मा से अपना लेवें। अन्यथा ये जनता वोट और नोट दोनों देना जानती है।

योगी शुक्राईनाथ
शिष्य महन्त श्री डॉ. चेताईनाथ जी योगी
(महामंत्री अवधूत योगी महासभा, हरिद्वार)

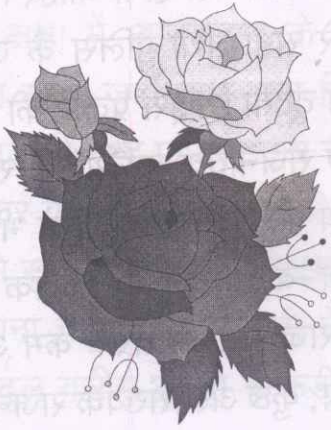

हे प्रभु आनन्द दाता ज्ञान हमको दीजिए....
लिजिए हमको शरण में हम सदाचारी बने।
शीघ्र सारे दुर्गुणों को दूर हमसे कीजिए....

लेखक :

योगी शुक्राईनाथ

कण्डेला जीन्द (हरियाणा राज्य) भारत

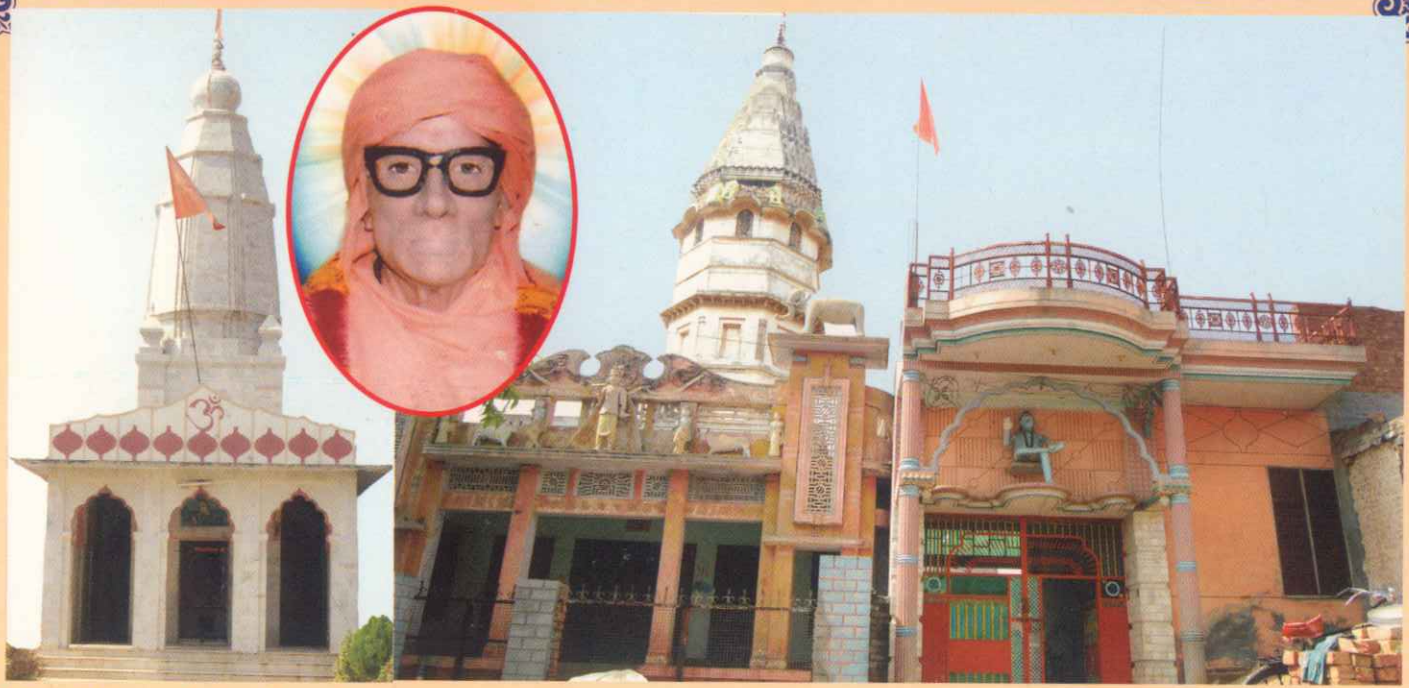

श्री सिद्ध योगेश्वर स्वामी कृष्णाईनाथ जी महाराज
का समाधि स्थल एवं इनसेट में
श्री स्वामी कृष्णाईनाथ जी महाराज का चित्र

प्राचीन शिव मन्दिर

आश्रम का मुख्य द्वार